स्थापित : १८६७ ई.

ओ३म्

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुखपत्र

• वर्ष : ११६ • अंक : ४८ • २३ दिसम्बर, २०१४ (मंगलवार) पौष शुल्क द्वितीया, सम्वत् २०७१

• दयानन्दाब्द १६० वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११५

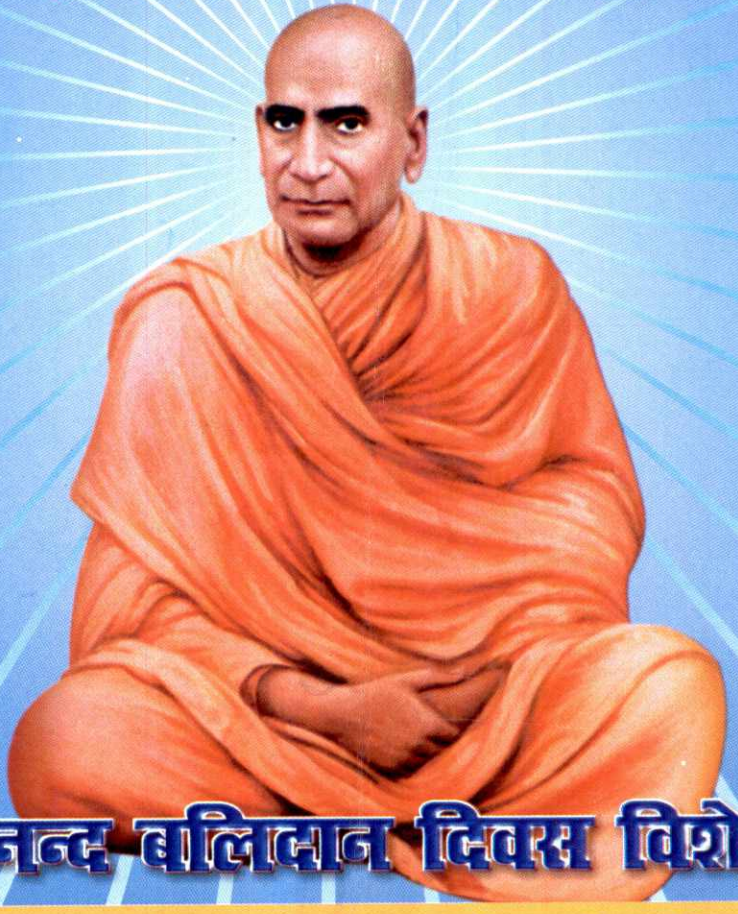

श्रद्धानन्द बलिदान दिवस विशेषांक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, 5 मीराबाई मार्ग, लखनऊ

देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान/संरक्षक

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

आचार्य वेदव्रत अवस्थी
सम्पादक

संस्थापित 1897 ई.

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

कार्यालय : नारायण स्वामी भवन, 5, मीराबाई मार्ग, लखनऊ

संरक्षक :
देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान

धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

आचार्य वेदव्रत अवस्थी
सम्पादक

पत्रांक..... दिनांक.....

वेदामृतम्

ओ३म् संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जायताम्
देवाभागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते

हे प्रभो हम सभी संगठित हों, हमारी वाणी के भाव शब्द एक सदृश ही हों। हम सबके मन भी एक सदृश हों। हम पूर्वज देवजनों के समान ही जीवन आचरण करने वाले हों।

ओ३म् समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः
सहचित्तमेषाम्
समानं मंत्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि।

हे प्रभो हमारी सबकी मंत्रणा हमारी सभाओं व समितियों में हम सबका चिन्तन एक समान ही हो। हम सभी एक सदृश सद्भाव वाले हों हमारे सबके व्यवहार यज्ञ सदृश हों।

-प्रीति एवं कीर्ति अवस्थी

आफिस दूरभाष : 0522-2286328 ई-मेल-apsabhaup.86@gmail.com

सभा प्रधान जी का सन्देश-

हम सभी आर्य भारत माता के गौरव की रक्षा के लिए आत्मोत्सर्ग करने में संकोच न करेंगे

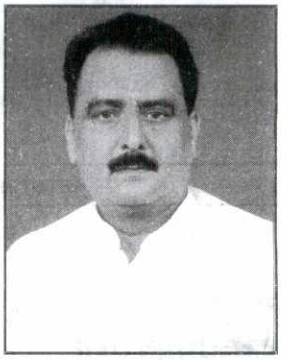

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी के बलिदान दिवस पर आर्य मित्र साप्ताहिक अपना विशेषांक निकाल रहा है, यह प्रशंसनीय है। स्वामी श्रद्धानन्द जी महर्षि दयानन्द सरस्वती के शिष्यों में योग्यतम् शिष्य थे। उनका जीवन महर्षि के सान्निध्य से पूर्णतया निष्कलुष हो गया। फिर उन्होंने अपना सारा जीवन महर्षि दयानन्द के मन्तव्यों के अनुरूप सुखी समृद्ध ढोंग पाखण्ड, नारी उत्पीड़न एवं अशिक्षा रहित बनाने के लिए राष्ट्र को सौंप दिया। जो दूसरे से अपेक्षा की वह स्वयं अपने जीवन में करके दिखाया।

महर्षि दयानन्द ने गुरूकुलीय शिक्षा पद्धति को राष्ट्र निर्माण की दवा माना था। उसकी पूर्ति के लिए श्रद्धानन्द जी ने कांगड़ी ग्राम के निकट गुरूकुल की स्थापना की और सर्वप्रथम अपने दोनों पुत्रों श्री हरिश्चन्द्र एवं इन्द्र जी को पढ़ने के लिए प्रविष्ट कराया। गुरूकुल के संचालन के लिए जनता दान स्वेच्छा से देने को प्रवृत्त हो-तो स्वयं अपनी कोठी आदि बेच कर सब धन गुरूकुल को भेंट कर दिया। अपनी पुत्री से बाल सुलभ भाषा में, 'ईसा ईसा बोल तेरा क्या लगेगा मोल ईसा मेरा कृष्ण कन्हैया ईसा मेरा राम रमैया' गाते सुना तो सावधान होकर बालिकाओं के लिए आर्य विद्यालय खुलवाने की धुन सवार हो गयी और अनेक बालिका विद्यालय खुल गये। हिन्दुओं को डरा-धमका, लोभ-लालच देकर मुसलमान, ईसाई बनाने के अभियान को रोकने के लिए शुद्धि आन्दोलन चलाया, जिसमें हजारों की संख्या में शुद्ध होकर आर्य बनने लगे। महात्मा गांधी सहित कई नेताओं ने उन्हें यह आन्दोलन बन्द करने की सलाह दी तो स्वामी जी ने बड़े स्पष्ट शब्दों में कहा कि जिस दिन ईसाई मुसलमान प्रचारक ईसाई मुसलमान बनाना बन्द कर देंगे तो मैं भी अपना आन्दोलन बन्द कर दूँगा। जब तक वे ऐसा नहीं करेंगे मेरा आन्दोलन निर्बाध जारी रहेगा- यह कह कर कांग्रेस ही छोड़ दी। जब कि वे कांग्रेस के वरिष्ठतम सर्वमान्य नेता थे। इस प्रकार उन्होंने महर्षि दयानन्द के मन्तव्यों के अनुरूप भारत को बनाने के लिए अपना जीवन होम दिया। 23 दिसम्बर 1926 को एक धर्मान्ध मुसलमान अब्दुल रशीद ने उनसे शास्त्रार्थ करने के बहाने मिलने गया और उनकी धोखे से गोली मारकर हत्या कर दी। उनका यह नश्वर शरीर छूट गया परंतु वह अमर हो गये। आज सारे विश्व में उनके बलिदान की यशोगाथा गायी जा रही है।

आइये उनके इस बलिदान पर्व पर हम सभी आर्यजन अपने जीवन को राष्ट्रोत्थान के लिए पूर्णतया समर्पित करने का व्रत ले। आज हमारा देश भ्रष्टाचार, अनाचार, ढोंग, पाखण्ड, बलात्कार, नारी शोषण से विनाश के कगार पर जा रहा है। हम संकल्प ले हम सभी स्वयं अपने को सच्चा आर्य बनाकर भारत माता के गौरव की रक्षार्थ अपना आत्मोत्सर्ग करने में संकोच नहीं करेंगे। राष्ट्र को उन्नति के शिखर पर ले जाने में ही अपना गौरव मानेंगे।

देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान

शुभकामना सन्देश

स्वामी श्रद्धानन्द जी महराज ने अपने जीवन की, अपने परिवार की, समस्त ऊर्जा, सम्पत्ति, महर्षि दयानन्द सरस्वती के विचारों के प्रचार-प्रसार में समर्पित करके अपने आपको सौभाग्यशाली बनाया। उन्होंने महर्षि से प्रभावित होकर अपने जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया। उसी परिवर्तन को चाहते थे कि प्रत्येक मानव अपनाकर अपना सौभाग्य वर्द्धन करें। अतः उन्होंने मूल में पानी डालने का कार्य प्रारम्भ किया। गुरूकुल शिक्षा प्रणाली चलायी। लोगों ने कहा कि ये उल्टी गंगा बहा रहें है। अफवाहों की चिन्ता न करके अपने मार्ग पर आगे बढ़ते रहें और पारिवारिक विकास का मूलमन्त्र व्यवहारिक रूप से सभी को क्रियान्वित करके दिखा दिया। सामाजिक शक्ति के विकास के लिए समाज को सुदृढ़ करने की दिशा में शुद्धि आन्दोलन प्रारम्भ करके अपने बिछुड़े भाइयों को साथ में मिलाकर पिछड़ों को मिलाने के लिए अहर्निश पुरुषार्थ किया। ऐसे महामनीषी चिन्तक आर्य समाज के शिरोमणि सन्त में विषय में आर्यमित्र अपना विशेषांक निकालकर उनके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने का प्रयास कर रहा है।

मैं इस अवसर पर अपने सम्पादक एवं अधिकारियों का आभार व्यक्त करना कर्तव्य समझता हूँ। जिनकी अनुमति से श्रेष्ठ आर्य विद्वज्जनों के विचारों से आर्य जनता लाभान्वित होकर स्वामी श्रद्धानन्द जी महराज की तरह आर्य समाज के कार्य को बढ़ाने का संकल्प लेकर ऊर्जा प्राप्त कर सकें। प्रकाशन की सफलता के लिए बहुत-बहुत शुभकामनायें स्वीकार करें।

धर्मेश्वरानन्द सरस्वती

सभा मंत्री

शुभ कामना सन्देश-

श्रद्धानन्द बलिदान दिवस पर राष्ट्र के लिए समर्पण की प्रेरणा लें

आर्य मित्र साप्ताहिक श्रद्धानन्द बलिदान दिवस विशेषांक निकाल रहा है यह जानकर हर्ष हुआ। स्वामी श्रद्धानन्द जी महर्षि दयानन्द सरस्वती के सान्निध्य से चमकते सितारे बन गये। उन्होंने महर्षि के अनुरूप भारत बनाने की भावना से गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना की और उसके लिए अपना सर्वस्व उसमें लगा दिया पराधीनता के काल में कोई भी अपने बच्चों को गुरूकुल में पढ़ाने को भेजने को तैयार नहीं था उन्होंने अपने दोनों पुत्रों का सर्वप्रथम गुरूकुल में प्रवेश कराया।

देश में लालच प्रलोभन व डरा धमका कर हिन्दुओं को ईसाई मुसलमान बनाया जा रहा था, उन्होंने उसकी गम्भीरता को जानकर शुद्धि आन्दोलन चलाया। जिस पर गांधी जी ने नाराजगी जाहिर की। स्वामी जी ने निर्भय होकर कहा कि जब तक हमारे भाई बहन ईसाई मुसलमान बनाये जायेंगे हम भी शुद्धि आन्दोलन द्वारा अपने बिछुड़ों को अपने घर परिवार में लाने के लिए लगे रहेंगे। एक सिरफिरे मुसलमान अब्दुल रशीद ने 23 दिसम्बर 1926 को उनके घर पर जाकर धोखे से उनकी पिस्तौल से हत्या कर दी। उनका प्राणान्त हो गया परन्तु वह सदा सदा के लिए अमर हो गये।

प्रत्येक त्यौहार हमें उसके मर्म को बताने के लिए आते हैं। हम सभी आर्यो का धर्म है कि हम उनके बलिदान से प्रेरणा लें और अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्रहित में लगाने का संकल्प लें। राष्ट्र हित में मृत्यु का भी यदि वरण करना पड़े तो निःसंकोच उस का वरण करें और देश को सदा विश्व का सिरमौर बनाने के प्रयत्न में लगे रहें।

डा. धीरज सिंह
कोषाध्यक्ष सभा

सम्पादकीय-

धर्मान्तरण एक रोग है, रोग का निदान अपरिहार्य है

धर्म एक है अनेक नहीं, वह शाश्वत है, अपरिवर्तनीय है, 'धर्मो धारयते प्रजा' धर्म प्रजा का धारण करता है अर्थात् उसे सुखी समृद्ध बनाता है। धर्म का विलोम अधर्म है वह विनाश का कारक है। धर्म का सबसे मोटा अर्थ कर्तव्य है अर्थात् प्राणि मात्र को सुखी समृद्ध रखने के उपायों को समझना और व्यवहार करना। परमात्मा ने सृष्टि के निर्माण के साथ ही वेद ज्ञान दिया जिसके द्वारा धर्म अधर्म का भेद पूरी तरह से समझना धार्मिक व्यक्ति बनने का मार्ग दर्शन दिया है।

आजकल धर्मान्तरण के नाम पर संसद के भी चलने में बाधा डाली जा रही है। संसद राष्ट्र को सुखी समृद्ध रखने के सभी उपायों पर चिन्तन करने का स्थान के रूप में है ताकि देश में कोई विकार न आये। राष्ट्र की कोई हानि न हो परन्तु आजकल संसद का अधिकांश समय व्यर्थ के विवादों में ही बीतने लगा है, राष्ट्र निर्माणकारी चिन्तन के लिए स्थान नहीं निकल पाता।

वैदिक धर्म की व्यवस्था सृष्टि आरम्भ से सृष्टि को सुखी बनाने के लिए परमात्मा ने दी थी। विभिन्न विचारकों द्वारा अपने अपने विचारों के मत चलाये। दो हजार वर्ष पूर्व ईसा मसीह ने जब यहूदियों द्वारा अनाचार जोर जबरदस्ती का आतंक बढ़ रहा था तब उन विकारों को दूर करने के लिए अपने विचार दिये। उनके विचारों के समर्थकों ने ईसाई मत चलाया। लगभग पन्द्रह सौ वर्ष पूर्व जब मूर्ति पूजा अत्यन्त बढ़ रही थी तो मुहम्मद साहब ने निराकार ईश्वर की पूजा का प्रचार किया जो बाद में इस्लाम मत के नाम से जाना जाने लगा। महात्मा बुद्ध ने जीव हिंसा के विरूद्ध आवाज उठाई उससे बौद्ध मत उपजा परंतु यह सभी मत है, धर्म नहीं। धर्मस्थापन के महापुरूषों के विचार या भाव है। सभी के अनुयायियों ने अपने अपने मत के प्रचार में जोर लगाया। हमारे देश में सनातन धर्म के सही रूप को न समझने के कारण कुछ लोगों ने जन्मना जाति व्यवस्था बना डाली। वैदिक व्यवस्था में ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वर्ण की व्यवस्था राष्ट्र को सुखी रखने की थी- जिसमें ज्ञान प्रसारक को ब्राह्मण, रक्षा सुरक्षा में रत व्यक्ति को क्षत्रिय, व्यापार में रत व्यक्ति को वैश्य और सभी के सहायक के रूप में जो था उसे शूद्र संज्ञा दी गयी थी परंतु जन्मना व्यवस्था बनाने वालों ने वेद की जाति व्यवस्था के मर्म को नहीं समझा था फलतः ऊँच नीच का भेद बढ़ने लगा। शूद्र वर्ग को प्रताड़ित किया जाने लगा तथा ईसाई मत के प्रचारकों ने इसका लाभ उठाकर उस प्रताड़ित होने वाले वर्ग को लोभ, लालच देकर ईसाई बनाने का अभियान चलाया। यवन शासकों के समय यवन आक्रान्ताओं ने इस्लाम के प्रचार के लिए जोर जबर्दस्ती से लोगों को मुसलमान बनाना प्रारम्भ किया। अंग्रेजों के शासन काल में दोनों ही वर्ग मतान्तरण में बड़े ही जोर शोर से लग गये। महर्षि दयानन्द ने इस मतान्तरण की कुत्सित भावना को समझ कर इसके विरूद्ध भी आवाज उठाई।

कांग्रेस के वरिष्ठ नेता स्वाधीनता संग्राम के अग्रणी नेता स्वामी श्रद्धानन्द जी ने मतान्तरण के विरूद्ध शुद्धि आन्दोलन चलाया बलात् बहला कर मतान्तरित लोगों को शुद्ध करना आरम्भ किया। महात्मा गांधी ने यह अभियान न चलाने का सुझाव स्वामी श्रद्धानन्द जी को दिया तो श्रद्धानन्द जी ने कहा कि जब तक ईसाई मुसलमान लोभ, लालच, जोर-जबर्दस्ती लोगों को मतान्तरित करते रहेंगे तब तक मेरा भी शुद्धि आन्दोलन चलता रहेगा, जब वे बन्द कर देंगे तो हम भी शुद्धि आन्दोलन बन्द कर देंगे। परंतु स्वामी जी की बात से बहुत से

कांग्रेसी नेता असहमत हुये तो स्वामीजी ने कांग्रेस ही छोड़ दी और अपना आन्दोलन जारी रखा, स्वामी श्रद्धानन्द वह नेता थे जो जन जन में एकता संस्थापित करने में आद्योपांत लगे रहे। जामा मस्जिद में केवल वही एक हिन्दू नेता थे जिन्होंने वेद मंत्रों के पाठ के साथ सभी को साम्प्रदायिक भावना के विपरीत संगठित रूप में राष्ट्र को स्वाधीन बनाने के लिए समर्पित होने का सन्देश दिया था। जिनकी एक सिरफिरे अब्दुल रशीद ने 23 दिसम्बर 1926 को हत्या कर दी थी। स्वामी जी के बाद भी आर्य समाज का शुद्धि आन्दोलन चलता रहा। आजादी के बाद अपना सम्विधान बना जिसमें राष्ट्र को मत निरपेक्ष कहा गया। अर्थात् प्रत्येक मतावलम्बी की पूजा पद्धति पर कोई अवरोध न डाला जा सके। परन्तु धर्म व मत (मजहब) के अन्तर को न समझने के कारण मत को धर्म कहना आरम्भ कर दिया गया। धर्म व मत के अर्थ को न समझने के कारण मत को धर्म कहकर धर्मान्तरण शब्द गढ़ लिया गया, जो शब्द आज देश को तोड़ने का काम कर रहा है।

लोभ लालच देकर या जोर-जबरदस्ती मत परिवर्तन करने का अधिकार किसी को भी नहीं है। परंतु विकृत मस्तिष्क अशान्ति उत्पन्न कराने के लिए ऐसे षडयन्त्र करते रहते है। ईसाई मुसलमान हिन्दू सिक्ख जैन बौद्ध जो भी सम्प्रदाय देश में सम्प्रति है सभी को अपना अपना प्रचार करने की स्वतंत्रता है जबर्दस्ती की नहीं। परंतु ईसाई मुसलमान अपने हथकंडे अपनाकर आज भी मत परिवर्तन कराकर अपनी जमात बढ़ा रहे हैं। उन पर कोई राजनेता आवाज क्यों नहीं उठाता।

हिन्दू संगठनों ने जो सामूहिक मतान्तरण जिसे आज धर्मान्तरण कहा जा रहा है आरंभ किया तो क्यों बवेला मचाया जा रहा है। मतान्तरण मन परिवर्तन का विषय है, सत्संग स्वाध्याय से मन में परिवर्तन जो आता है वही स्वीकार्य होता है अन्यथा नहीं। परंतु राजनीति में पक्षपात की प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिए जो आज चल रही है केवल अपना वोट बैंक बनाने व बचाने के लिए। यह देश के लिए घातक है। देश का प्रत्येक नागरिक भारतीय है हिन्दू मुस्लिम, सिक्ख व ईसाई अपनी पूजा अपने पारिवारिक कृत्यों के लिए स्वतंत्र है। राजनेताओं को सबको भारतीय बनने का संदेश देना चाहिए। कोई भी वर्ग व सम्प्रदाय यदि लोभ प्रलोभन, बलात् मत परिवर्तन कराने का प्रयत्न करता है तो सरकार का धर्म है कि उसे सख्ती से रोके। राजनेता वोट बैंक का लालच छोड़ उस मतान्तरण का सशक्त विरोध करें। देश के प्रत्येक नागरिक को मत व धर्म का सही अर्थ समझाने के लिए शासकीय व्यवस्था तो कोई हो न सकेगी अतः आर्य समाज को यह दायित्व अपने ऊपर लेकर जन जन में धर्म व मत का सही रूप समझाने का कर्तव्य निभाना चाहिए ताकि धर्मान्तरण जैसे रोग उत्पन्न ही न हो।

आशा है सभी प्रबुद्ध नागरिक राजनेता धार्मिक नेता विभिन्न मत-मतान्तरों के प्रचारक इस विषय पर गंभीर चिन्तन करेंगे और राष्ट्र को सुखी समृद्ध और संगठित रखने के लिए धर्म के नाम पर फैलते विकारों से राष्ट्र को मुक्त रखने में तत्परता दिखायेंगे।

ताकि हमारा भारत देश अपने समीचीन उत्कर्ष से सम्पूर्ण विश्व को मार्गदर्शन देने का अधिकार प्राप्त कर सकें।

-सम्पादक

प्रधान सम्पादक की लेखनी से-

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में-स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती की उपयोगिता

-धर्मेश्वरनन्द सरस्वती

सभा मंत्री

स्वामी श्रद्धानन्द जी का नाम स्मरण करते ही एक विशालकाय व्यक्तित्व आँखों के सामने आ जाता है। उनके विचारों से देश और समाज की ऊर्जा प्राप्त होती है आपने अपनी दूरदर्शिता का परिचय देते हुए तत्कालीन परिस्थितियों का अध्ययन किया और उसका समाधान करने की योजना तैयार की और क्रियान्वित करने के लिए अपने परिवार के भविष्य की चिन्ता किये बिना पूरी तन्मयता से समर्पित हो गए आज की राजनीति-धर्मनीति-समाज के वातावरण को देखते हुए तुलनात्मक अध्ययन करें तो स्वामी श्रद्धानन्द जी जैसे परिवार धर्म की रक्षा और वेद की रक्षा के लिए हम कितना समय तथा घन दे पा रहें हैं।

महात्मा मुंशीराम के रूप में स्थित जब स्वामी जी ने अपनी पुत्री कु0 वेदवती के मुख से सुना कि ईशा-ईशाा बोल-तेरा क्या लगेगा मोल।

ईशा मेरा राम रमैय्या - ईशा मेरा कृष्ण कन्हैय्या।

इन शब्दों को सुनकर स्वामी जी का हृदय वेदना से परिपूर्ण हो गया और तत्काल ला0 देवराज जी आर्य प्रधान आर्य समाज जालन्धर को बुलाकर अपने हृदय की पीड़ा सुनाते हुए कहा कि मेरे बच्चे मेरे सामने ही मेरे दुश्मन तैयार हो रहे हैं विपरीत विचारधारा से बालक हमारे संस्कारों से दूर होकर ईशा के विचारों से प्रभावित हो रहे हैं।

अतः मैं पुत्री पाठशाला की स्थापना करने के लिए अपनी कोठी दान करता हूँ और संसार के इतिहास में नींव के पत्थर बनकर वर्तमान युग में सर्वप्रथम पुत्री पाठशाला की स्थापना करके स्वर्णाक्षरों में अपना नाम अंकित किया। इससे पूर्व भारत वर्ष में कोई भी पुत्री पाठशाला नहीं थी। स्वामी जी का साहसिक कदम आर्य जाति के लिए संजीवनी बन गया जिसका परिणाम यह हुआ कि आर्य समाज मन्दिरों में प्रायः आर्य कन्या विद्यालयों की स्थापना की गई जो भारत वर्ष में आन्दोलन के रूप में प्रभावित हुआ पुराने रिकार्ड के आधार पर आर्यप्रतिनिधि सभा उ0प्र0 के अन्तर्गत आर्य समाज द्वारा संचालित कई सौ विद्यालय एवं इण्टर कालेज हैं। वर्तमान सन्दर्भ में हम अपने आपको आर्य कहलाने वाले अपने बच्चों को कहाँ पढ़ाने में गौरवान्वित हैं ?जब देश में भ्रूणहत्या-दहेजप्रथा-बलात्कार जैसे जघन्य अपराध हो रहे

हों जब आर्यसमाज के प्रहरी-अधिकारी-कार्यकर्ता एवं सदस्य जनसामान्य की तरह अपनी दिनचर्या में अपने व्यवहार में अपने क्रियाकलाप तथा योजनाओं में समर्पितभाव से अपनी पहचान न बना पाये तो फिर हम श्रद्धानन्द जी को प्रतिवर्ष बलिदान दिवस पर स्मरण कर लेना रामलीला में रावण वध के ही समान दिखाई देने लगता है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी महर्षि दयानन्द सरस्वती के सच्चे मानस पुत्र थे उन्होंने अपने बाल्यकाल में महर्षि जी के दर्शन करके आशीर्वाद लिया था और अपनी शंकाओं का भी समाधान किया था, शंका समाधान हो जाने पर मुंशीराम बालक ने कहा था कि स्वामी जी आपने समाधान तो कर दिया। लेकिन प्रभु के प्रति मुझे अभी विश्वास नहीं है तब हँसते हुए स्वामी जी ने उत्तर दिया कि ईश्वर पर विश्वास तो तब होगा जब प्रभु की कृपा होगी। इतना सुनकर बालक मुंशीराम ईश्वर की कृपा पाने के उपायों को ही खोजते-खोजते एक दिन सफलता प्राप्त करके ईश्वर भक्त बन गए आपने इस बात को अच्छी प्रकार से समझ लिया था कि वैदिक आर्य शिक्षण के बिना बच्चों को राष्ट्र की धरोहर नहीं बना सकते अतः विपरीत परिस्थितियों में भी अपने संकल्प को पूरा करने में जुट गए। औरों से शिकायत क्या होगी ? अपनों ने ही साथ नहीं दिया डी0ए0वी0 विभाग में कार्यरत सभी नेताओं ने सम्भवतः आपकी परीक्षा लेना श्रेयस्कर समझा होगा आप अपनी परीक्षा में उत्तीर्ण हुए और छः मास में तीस हजार रूपया संग्रहीत किया। मुंशीराम जी को अमन सिंह जैसे- महाराणा प्रताप जी को भाभाशाह सेठ मिले थे वैसे ही-मुंशी अमन सिंह जी ने स्वामी जी के लिए कांगड़ी ग्राम की भूमि उपलब्ध कराई जिससे स्वामी जी उत्साहित हो गए जैसा स्थान वे चाहते थे वैसा ही स्थान मिल गया। गंगा किनारे एवं हिमालय पर्वत की छाया में बैठकर वेद के विद्वान तैयार किये राष्ट्रभक्त एवं अच्छे पत्रकार समाज सुधारक आर्यसमाज को प्रदान किये। अंग्रेजी सत्ता के विरोध में सेनानी तैयार किये अंग्रेजी सरकार की कोप दृष्टि गुरूकुल पर पड़ी- अचानक छापा मारकर निरीक्षण किया तो स्वामी जी ने बताया कि कुछ मिला उत्तर में कुछ नहीं। तब स्वामी जी यज्ञशाला में ब्रह्मचारियों को दिखाकर कहा कि ये जो ब्रह्मचारी बैठे हैं ये ही मेरे असली बम्ब हैं ये जब स्नातक होकर निकलेगे तब समाज से अविद्या-अन्याय का विनाश करेगें। स्वामी जी ने भावी पीढ़ी को संस्कार देने की योजना बनाई पर हम उसे भी स्वीकार नहीं कर पाये और हम सभी आधुनिकता की दौड़ में आकर ऋषि परम्परा का निर्वाह नहीं कर पाये अतः आर्य समाज संस्था अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु पुरूषार्थ नहीं कर पा रही है। स्वामी जी ने दलितोद्धार की योजना बनाई और शुद्धि सुदर्शन चक्र चलाकर अपने पुराने बिछुड़े हुए भाईयों को गले से लगाया और शुद्ध करके पुनः आर्य होने का गौरव प्राप्त कराया गया। मुस्लिम लोगों ने जब स्वामी जी से कहा कि यदि रोटी-बेटी का सम्बन्ध बनता है तो हमें कोई आपत्ति नहीं है तब हिन्दू परिवार की बेटी देने के लिए आर्य परिवार तैयार करना कितना कठिन था आज

के सन्दर्भ में चिन्तन करें कि हम अभी तक आर्य परिवार होते हुए आर्य विचारधारा के परिवार से वर्तमान जाति को समाप्त नहीं कर पा रहे हैं लेकिन स्वामी जी ने उस समय अपनी ओजस्विता योग्यता से बेटी का सम्बन्ध बनाया और शुद्धि के कार्य में प्रगति करते हुए शुद्धि प्राप्त लोगों में आत्मीयता प्रदान की ऐसी कई घटनायें आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में चर्चित होती रहती है।

कुए पर पानी भरना अपराध माना जाता था छूआछूत का वातावरण सर्वत्र व्याप्त था स्वामी जी दलित बस्तियों में जाकर उन्हें उपदेश देकर अपना बनाने और उन्हें ऊँचा उठाने का उत्साह पैदा करते थे। सामाजिक क्षेत्र में बढ़ते हुए स्वामी जी ने राजनैतिक स्वरूप प्राप्त किया और राजनीति के तत्कालीन नेताओं में हिन्दी भाषा के प्रति-देश की अस्मिता के प्रति स्वदेशी और नारी सम्मान के प्रति जनजागरण पैदा किया। अखिल भारतीय कांग्रेस के अधिवेशन में अपना भाषण हिन्दी में पढ़ा-असहयोग आन्दोलन को तीव्रता प्रदान की। मोहनदास करमचन्द गांधी को सम्मानित करके उन्हें महात्मा के नाम से सुशोभित किया। स्वामी जी का अपना प्रभाव इतना बढ़ा कि दिल्ली के घण्टाघर पर जुलूस (शोभायात्रा) का नेतृत्व किया वहां अंग्रेजों ने आपको डराना चाहा तो आपके ये शब्द आज भी अमर वाक्य बन गए जिसे बोलकर लोग उत्साह प्राप्त करते हैं कि -

"हिम्मत हो तो चलाओं गोली-सन्यासी का सीना खुला है"

इस प्रकार अमर सेनानी 23 दिसम्बर 1926 की सायंकाल अपनी वीरता-उदारता का परिचय देते हुए वीरगति को प्राप्त कर 3 गोलियों खाते हुए बलिवेदी पर अमर होकर अपना नाम सदा-सदा के लिए प्रेरणा करने वालों में लिखा गये।

श्रद्धा से श्रद्धानन्द ने सीने में खाई गोलियाँ - "यह वाक्य भी बच्चे गली-2 में सुनाते हुए उत्साह प्राप्त करते हैं। देश-धर्म-जाति के लिए बलिदान होने का साक्षात् प्रमाण हैं स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज। वर्तमान सन्दर्भ में आने वाली प्रत्येक समस्या का समाधान हैं स्वामी जी। अतः उनके इस बलिदान दिवस पर हम संकल्प लें कि स्वामी जी द्वारा चलाये गए अभियान को पूरा करने के लिए सदैव तैयार रहेगें और आर्य समाज की पुरानी अस्मिता और परम्परा को जीवित करके उसे आगे बढ़ायेंगे अपनी भावी पीढ़ी को वैदिक संस्कारों से युक्त करेगें तभी आर्य समाज पुराने गौरव को प्राप्त करेगा प्रभू हमें सद्बुद्धि धैर्य एवं सामर्थ्य प्रदान करें।

जन्मजात सफल सेनानी -

स्वामी श्रद्धानन्द

(श्री धर्मवीर विद्यालंकार)

धन्या नरा विहित कर्म परोपकाराः। वे मनुष्य धन्य हैं, जिनका जीवन दूसरों के दुःखों को दूर करने में समर्पित है। वे जातियाँ धन्य हैं, जो इस प्रकार सेवा-व्रती मनुष्यों को उत्पन्न करती हैं, और वे जातियाँ अमर हो जाती हैं जो उन परहितचिन्तक, प्रातः स्मरणीय मनीषी महा-पुरुषों को स्मरण करती रहती हैं, और उनके पद-चिह्नों पर चलते हुए विश्व के सुख-समृद्धि और शांति में वृद्धि करती हैं। भारतीय परम्परा में महापुरुषों के जन्म दिवस मनाने की प्रथा कम है। महापुरुषों द्वारा सम्पादित महत्वपूर्ण कार्यों के अनुसार उनको स्मरण करने का दिन निश्चित किया जाता है। स्वामी श्रद्धानन्द जी का जन्म 13 फाल्गुन, संवत् 1913 तदनुसार सन् 1856 में हुआ था। परन्तु भारतीय जनता 23, दिसम्बर को उन्हें स्मरण कर अनुप्राणित होती है। 23 दिसम्बर सन् 1926 के दिन एक धर्मान्ध मुसलमान, अब्दुलरशीद की तीन गोलियों को झेलकर वे अमर बलिदानी हो गये। उनकी जीवन-गाथा से अपने जीवन में उत्साह, कर्मण्यता, देश धर्म और प्राणि मात्र की खोज में अपने को समर्पित करने का संकल्प ग्रहण करते हैं।

मेधावी बालक

स्वामी श्रद्धानन्द जी का बचपन का नाम मुंशीराम था। उनके दो बड़े भाईयों को पढ़ाने एक पण्डित जी घर आया करते थे। कभी-कभी बड़ी विचित्र बात होती। वे दोनों बालक जब पण्डित जी को पढ़ा पाठ न सुना पाते, तब 3। 4 वर्ष का बालक मुंशीराम सुना देता। अपने भाईयों को वह पढ़ते देखता, और पण्डित जी की बात सुनता था। बात को ग्रहण करने और स्मरण करने वाली प्रखर मेधा का ही यह प्रभाव था। नवयुवक मुंशीराम आस्तिक से नास्तिक बना। फिर स्वामी दयानन्द के तर्कों से पराजित हो ऐसा आस्तिक बना कि हजारों को आस्तिक बना दिया। फिर कठिन वेदमन्त्रों का सरल मनोहारी व्याख्यान करने लगा। यह बचपन की प्रखर मेधा का ही अद्‌भुत परिणाम था।

सत्य का कर्मठ अन्वेषक

मुंशीराम के माता-पिता धार्मिक वृत्ति के थे। मुंशीराम भी 'पितुः अनुव्रतः पुत्रः' शिव के उपासक थे। किशोरावस्था में बनारस रहते हुए प्रतिदिन 'विश्वनाथ के दर्शन हेतु मन्दिर जाया करते थे। एक दिन कुछ देर हो गई। रींवां रियासत की रानी पूजा-पाठ कर रही थीं। मुंशीराम को प्रवेश न मिला। उस नवयुवक हृदय को ठेस लगी। उन्हीं दिनों ब्राह्मणों के पाखण्ड और वाम-मार्गियों के कुकृत्य को स्वयं

देख ईसाई बनने चल पड़े। पादरी की अनुपस्थिति में, उसके घर एक अश्लील घटना देख लौट पड़े कि-कर्तव्य विमूढ़ हो गये तथा नास्तिक हो गये धर्म-कर्म के प्रति श्रद्धा पूर्णतः लुप्त हो गई। परन्तु समस्त हृदय की आस्तिकता स्वामी दयानन्द के अद्‌भुत दिव्य स्पर्श पाकर पवित्र गंगा की निर्मल, शीतल धारा के समान स्वतन्त्र प्रवाहित होने लगी। यह घटना सन् 1879 की है। इसके पांच वर्षों के उपरान्त मुंशीराम नें सन् 1884 में आर्यसमाज की सदस्यता ग्रहण की । इन 5 वर्षों में वे निरन्तर संघर्ष करते रहे। सत्यार्थ-प्रकाश का अध्ययन करते रहे।

व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में परखते रहे। शराब पीना छोड़ा, फिर मांस खाना छोड़ा और आचरण को निरन्तर पवित्र और सत्यान्वेषी बनाते रहे। आर्य समाज की सदस्यता के अनुरूप चरित्रवान् होने पर ही उसकी सदस्यता ग्रहण की फिर तो वे उन्मुक्त पंछी की तरह पंख फैला उड़ने लगे। आर्य सिद्धांतों का मनन करना, मनन किये का व्याख्यान करना अपने उर्दू अखबार 'सद्धर्म प्रचारक' में उसे प्रकाशित करना, नगर-नगर, ग्राम-ग्राम में उसका प्रचार करना, लाहौर की आर्य समाजों के वार्षिक उत्सवों में स्वयं जाना, दूसरों को ले जाना, नये-नये ज्ञान प्राप्त कर उन पर आचरण करना और कराना-उनके जीवन के अंग हो गए। सांसारिक धन्धे छूट गये, वकालत बन्द कर दी, बच्चों को गुरूकुल में प्रविष्ट कर दिया। इतना कर्मठ कोई व्यक्ति नहीं हुआ जो आर्यसमाज का प्राथमिक सदस्य बनने के चार वर्ष के भीतर प्रांतीय सभा का पद पा ले। यह सत्य के ग्रहण का प्रभाव है।

वकालत करते हुए वे सदा सत्य पक्ष को ही ग्रहण करते थे। एक बार वे मुन्सिफ के सामने मुकदमा छोड़कर चले गये। प्रतिवादी के बयानों के मध्य वकील मुंशीराम ने अपने मुवक्किल से पूछा कि क्या प्रतिवादी सत्य कह रहा है ?मुवक्किल ने सत्य स्वीकार कर लिया। वकील मुंशीराम ने मुन्सिफ से सत्य स्वीकार कर मुकदमा समाप्त कर दिया और मुवक्किल की प्राप्त फीस उसे लौटा दी। अदालतों में इसका इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि अगर कोई गवाह अपने को आर्य समाजी कह दे तो उसे सत्यवादी मान लिया जाता था।

निर्भीक एवं साहसी

सत्य को मन एवं बुद्धि से जान, उस पर निर्भीकता और साहसपूर्वक आचरण करना उनका स्वभाव था। इसकी एक झलक उनकी नवयौवनावस्था में मिलती है। बनारस में विद्या अध्ययन के दिनों में एक बालिका को चार गुण्डों से अकेला ही लड़कर बचाया।

पण्डितों के पाखण्ड के कारण 'ईसाइयों के बलात्कार को देख उनकी धर्म के प्रति श्रद्धा समाप्त हो गई। इसे निर्भीकता से अपने पिता के सामने स्वीकारा। आर्य समाज में प्रविष्ट हुए फिर कन्या पाठशाला की स्थापना की तो बिरादरी से निकाले गये। इस समय अपूर्व साहस का धैर्य का और स्थिर

अविचल बुद्धि का परिचय दिया।

सन् 1919 में अंग्रेजों द्वारा लागू रोलेक्ट एक्ट के विरोध में भारी जुलूस चाँदनी चौक दिल्ली में स्वामी श्रद्धानन्द जी के नेतृत्व में जा रहा था। चाँदनी चौक के घण्टाघर पर गोरखा फौजियों द्वारा अंग्रेजों ने जुलूस को रोका और गोली चलाने का आदेश दिया। ऐसे घोर संकट में वह स्थित-प्रज्ञ संन्यासी सामने आया। अपने कुर्ते के बटन खोले। दोनों हाथों से सीना खोलकर निर्भीकता पूर्वक बोला - 'पहले मेरे सीने पर गोली चलाओ, फिर जनता पर चलाना।' उनके अदभ्य साहस के सामाने गोरखा सैनिक हतप्रभ और अंग्रेज दंग रह गये। रास्ता खुल गया। जुलूस पार्क में पहुंचा। शान्त और गम्भीर वातावरण में सभा सम्पन्न हुई। इस घटना के बाद भी 15 दिन तक ऐसी शान्ति रही, मानो रामराज्य स्थापित हो गया हो।

अमृतसर में होने वाले सन् 1919 के काँग्रेस अधिवेशन का दायित्व कोई लेने को तैयार न था इसके पहले जालियाँवाला बाग में हजारों निहत्थे भारतीयों को कूर अंग्रेजों ने गोलियों से भून दिया था। गम्भीर आतंक दिल-दिमाग पर घर कर चुका था। ऐसे संकट के समय स्वामी श्रद्धानन्द कांग्रेस के स्वागताध्यक्ष बने। गली-गली मुहल्ले-मुहल्ले में प्रचार किया। बाहिर से आने वाले प्रतिनिधियों का स्वागत अमृतसर निवासियों ने दिल खोलकर किया। प्रतिनिधियों को अपने घरों में ठहराया-उनके भोजन की व्यवस्था घरों में की। सम्मेलन को अभूतपूर्व सफलता मिली।

संकट के समय कांग्रेस को उबारने वाले स्वामी श्रद्धानन्द ने उसी कांग्रेस को निर्भीकता और साहस से एक दिन छोड़ अपनी अलग राह पकड़ी। कारण था कांग्रेस की मुस्लिम तुष्टीकरण की नीति। नया मार्ग जो स्वामी जी ने पकड़ा वह था शुद्धि आन्दोलन और राजनीति में हिन्दू हितों की रक्षा, अर्थात् हिन्दू सहायता की स्थापना। यह उससे भी अधिक साहस और निर्भीकता की अपेक्षा करता था। मुसलमान बने मेवों। (मेवातों) को फिर से हिन्दू बनाना परम आवश्यक था। इसी कार्य के कारण पं0 लेखराम सन् 1897 में बलिदान हो गये थे।

उन दिनों दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेज घोर अत्याचार कर रहे थे। महात्मा गांधी वहाँ सत्याग्रह कर रहे थे। गुरूकुल छात्रों ने मजदूरी से कमाया पर्याप्त धन बचाया मनों अन्न दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गांधी को भेजा। इससे अंग्रेजों को नाराज करना था- जो उनके आतंक से भयभीय भारतीयों के लिए जोखिम का काम था।

गुरूकुल तो खुल गया। पर सन्तोष तब हुआ, जब चौधरी अमन सिंह जी ने जिला विजनौर के कांगड़ी ग्राम में बहुत बड़ा भू-खण्ड 100 एकड़ जो गंगा के पवित्र धाराओं के मध्य, हिमालय की तलहटी में ऋषिनिर्माण के पवित्र उद्देश्य से मुंशीराम जिज्ञासु को दे दिया। उन्हें अपना स्वप्न साकार होता

प्रतीत हुआ। वेद की निम्न ऋचा उन्हें अपनी ओर प्रबल आकर्षण से खींच रहीं थी :-

उपह्वरे गिरीणां, संगमे च नदीनाम्।

धिया विप्रो अजायत। यजु 26 । 15

हिंसक पशुओं के मध्य घने जंगल में, घास की कमजोर झोपड़ियों में, जिसमें जेठ मास की लू, पौष मास की बर्फीली ठण्डी हवा, बिना रूकावट अन्दर आती थी, मुंशीराम जी जिज्ञासु 34 छोटे बालकों ब्रह्मचारियों के साथ पहुंचे, और पहुंचा हजारों की संख्या में आर्य संस्कृति का अनुयायी, एक भक्त-जन-समूह जो इस अद्‌भुत, नवीन, चमत्कारपूर्ण प्रयोग देखने का अभिलाषी था। उस वर्ष हरिद्वार में प्लेग फैल गया। सरकार ने जनता को इन बीमारी से सावधान करते हुए, वहां जाने से मना कर दिया। परन्तु इस चेतावनी की पूर्ण उपेक्षा करते हुए, जंगल में मंगल करने वाली अभूतपूर्व शिक्षा-प्रणाली के भक्त कब रूकने वाले थे। सोत्साह चले आये। यह था अप्रैल सन् 1902 ई0।

जैसे माता अपने गर्भस्य बालक का रक्षण-पालन-पोषण अत्यन्त सतर्कता, निपुणता से, वात्सल्य से करती है, ऐसे ही महात्मा मुंशीराम जी जिज्ञासु इन 34 ब्रह्मचारियों के आचार्य-माता-पिता के रूप में दिन में, रात्रि में, उषः काल और सायंकालीन संध्या बेला में, उनके चरित्र निर्माण में शारीरिक सबलता, सुडौलता, मानसिक दृढ़ता के विकास के लिए, आत्म-ज्योति प्रदीप्त होने के लिए अथक प्रयत्न करने लगे। यह शिक्षा प्रणाली विश्व भर में प्रसिद्ध हुई। इस संस्था ने अनेकों मनीषियों, तपस्वियों, ऋषियों को जन्म दिया, जिन्होंने वेदों के ज्ञान-प्रकाश से विश्व को आलोकित किया, अनेकों देश के स्वातन्त्र्य संग्राम में, धर्म संकट में आहुत हुए। सभी ने आर्य भाषा हिन्दी के साहित्य ऐश्वर्य में वृद्धि की। सभी ने सामाजिक सेवा के कीर्तिमान स्थापित किये। इस प्रकार के छोटे-छोटे अनेक गुरूकुल इस गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की शाखा रूप में प्रस्फुटित हुए। यह कहने में किंचित भी अत्युक्ति नहीं कि आज के पब्लिक स्कूल गुरूकुल शिक्षा प्रणाली का पाश्चात्यीकरण है।

गुरूकुल में स्वदेश-प्रेम, जाति-धर्म-संस्कृति पर निष्ठा, आस्तिकता सत्याचरण पर बल दिया जाता रहा। खादी वस्त्रों का पहिरावा, स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग किया जाता था।

प्राचीन शिक्षा के साथ-साथ, अंग्रेजी और विज्ञान की शिक्षा आरम्भ हो चुकी थी। शिल्प शिक्षा की व्यवस्था का प्रयत्न आरम्भ कर दिया था। शिक्षा माध्यम हिन्दी था। विज्ञान की पुस्तकें भी हिन्दी में ही छपा ली गई थीं। विश्व-विद्यालयों में पढ़ाया जाने वाला इतिहास भारतीयों को भ्रम में डालने वाला है। अंग्रेजों द्वारा खरीदे गये व्यक्तियों द्वारा-अंग्रेजों ने जैसा चाहा, लिखाया। गुरूकुल कांगड़ी में प्रोफेसर रामदेव जी आचार्य की अध्यक्षता में इतिहास सत्यरूप में प्रकाशित हुआ।

23 दिसम्बर, 1926 को एक मुसलमान युवक उनसे इस्लाम धर्म पर चर्चा करने आया। स्वामी जी कुछ दिनों से शैया पर बीमार पड़े थे। उसे फिर कभी आने को कहा गया परंतु स्वामी जी ने उसे बुला लिया। उसने अवसर पाकर स्वामी जी पर पिस्तौल से तीन फायर कर दिए। निःस्वार्थ सेवी, राष्ट्रनायक जन्मजात सफल सेगानी, भारतीय संस्कृति के पुनरूद्वारक जनहितार्थ समर्पित-जीवन दलितोद्वारक, आदर्श कर्म-योगी ने अपना धन, सम्पत्ति तन-मन तो राष्ट्र को पहले ही सनर्षित कर दिये थे। आज इस नश्वर शरीर को भी आहुत कर दिया। उनका पार्थिव-शरीर आज हमारे मध्य नहीं है। परन्तु उनके लेख-वाणी और कर्म हमारे मार्ग को प्रशस्त कर रहे हैं। जब तक चाँद और सूर्य है, उनकी अमर-गाथा जन-मानस को उत्साहित करती रहेगी।

मेरे विचार में यह कहना कुछ अंश में ठोक नहीं कि एक धर्मान्ध मुसलमान ने उनके प्राण हर लिए। अंग्रेज बड़ा चालाक है। अंग्रेजों ने ही -मुसलमान के माध्यम से उनके प्राण हरण किये हैं। स्वामी जी द्वारा गुरूकुल - स्थापना, शुद्धि आन्दोलन, दलितोद्वार, हिन्दी भाषा का प्रसार आदि किये गये कार्यों से जितना अधिक खतरा अंग्रेजों को था, उतना किसी को नहीं। पहला प्रमाण है उनके बलिदान का दिन वही है जो अंग्रेजों के बड़े दिन' का महत्वपूर्ण पर्व है। अर्थात् 23 दिसम्बर।

इस परम ज्योति के ओझल हो जाने से भारतीय जनता ने अंग्रेजों के जाने का मार्ग प्रशस्त किया। कांग्रेस को आर्य समाज का पूर्ण सहयोग मिला। उनके बलिदान के 21 वें वर्ष भारत स्वतन्त्र हो गया और अंग्रेज चला गया।

इस अमर बलिदानी, निर्भीक सन्यासी, गुरूकुल शिक्षा प्रणाली के संस्थापक, जन्म-जात सफल-सेनानी को हमारा शत्-शत् प्रणाम है।

प्रेरणादायक संस्मरण

स्वामी श्रद्धानन्द जी का हिन्दी प्रेम

- डॉ. विवेक आर्य

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का हिन्दी प्रेम जग जाहिर था। आप जीवनभर महर्षि दयानन्द के इस विचार को कि 'सम्पूर्ण देश को हिन्दी भाषा के माध्यम से एक सूत्र में पिरोया जा सकता हैं' सार्थक रूप से क्रियान्वित करने में अग्रसर रहे। सभी जानते हैं कि स्वामी जी ने कैसे एक रात में उर्दू में निकलने वाले सद्धर्म प्रचारक अखबार को हिन्दी में निकालना आरम्भ कर दिया था जबकि सभी ने उन्हें समझाया कि हिन्दी को लोग भी पढ़ना नहीं जानते और अखबार को घाटा होगा। मगर वह नहीं माने। अखबार को घाटे में चलाया मगर सद्धर्म प्रचारक को पढ़ने के लिए अनेक लोगों ने विशेषकर उत्तर भारत में देवनागरी लिपि को सीखा। यह स्वामी जी के तप और संघर्ष का परिणाम था। स्वामी जी द्वारा 1913 में भागलपुर में हुए हिन्दी साहित्य सम्मेलन में अध्यक्ष पद से जो भाषण दिया गया था उसमें उनका हिन्दी प्रेम स्पष्ट झलकता था। स्वामी जी लिखते हैं मैं सन् 1911 में दिल्ली के शाही दरबार में सद्धर्म प्रचारक के संपादक के अधिकार से शामिल हुआ था। मैंने प्रेस कैंप में ही डेरा डाला था। मद्रास के एक मशहूर दैनिक के संपादक महोदय से एक दिन मेरी बातचीत हुई। उन सज्जन का आग्रह था कि अंग्रेजी ही हमारी राष्ट्रभाषा बन सकती हैं। अंग्रेजी ने ही इंडियन नेशनल कांग्रेस को संभव बनाया हैं, इसीलिए उसी को राष्ट्रभाषा बनाना चाहिए। जब मैंने संस्कृत की ज्येष्ठ पुत्री आर्यभाषा (हिन्दी) का नाम लिया तो उन्होंने मेरी समझ पर हैरानी प्रकट की। उन्होंने कहा कि कौन शिक्षित पुरूष आपकी बात मानेगा ?दूसरे दिन वे कहार को भंगी समझकर अपनी अंग्रेजीनुमा तमिल में उसे सफाई करने की आज्ञा दे रहे थे। कहार कभी लोटा लाता कभी उनकी धोती की तरफ दौड़ता। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। मिस्टर एडिटर खिसियाते जाते। इतने में ही मैं उधर से गुजरा। वे भागते हुए मेरे पास आये और बोले 'यह मूर्ख मेरी बात नहीं समझता' इसे समझा दीजिये की जल्दी से शौचालय साफ कर दे। मैंने हंसकर कहा - 'अपनी प्यारी राष्ट्रभाषा में ही समझाइए।' इस पर वे शर्मिंदा हुए। मैंने कहार को मेहतर बुलाने के लिए भेज दिया। किन्तु एडिटर महोदय ने इसके बाद मुझसे आंख नहीं मिलाई।

भागलपुर आते हुए मैं लखनऊ रूका था। वहां श्रीमान जेम्स मेस्टन के यहाँ मेरी डॉ फिशर से भेंट हुई थी। वे बड़े प्रसिद्ध शिक्षाविद और कैंब्रिज विश्व विद्यालय के वाइस चांसलर थे, भारतवर्ष में पब्लिक सर्विस कमीशन के सदस्य बनकर आये थे। उन्होंने कहा कि मैंने अपने जीवन में सैकड़ों भारतीय विद्यार्थियों को पढ़ाया हैं। वे कठिन से कठिन विषय में अंग्रेज विद्यार्थियों का मुकाबला कर सकते हैं, परन्तु स्वतन्त्र विचार शक्ति उनमें नहीं हैं। उन्होंने मुझसे इसका कारण पूछा। मैंने कहा की यदि आप मेरे गुरूकुल चलें तो इसका कारण प्रत्यक्ष दिखा सकता हूँ, कहने से क्या लाभ ?जब तक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा नहीं होगी, तब तक इस अभागे देश के छात्रों में स्वतन्त्र और मौलिक चिंतन की शक्ति कैसे पैदा होगी ?

(100 वर्ष पहले दिए गए विचार आज भी कितने प्रासंगिक और यथार्थ है, पाठक स्वयं अवगत हैं)

मुम्बई का स्वामी श्रद्धानन्द महिला आश्रम

डॉ. चन्द्रकान्त गर्जे

सन् 1927 में मुम्बई में स्वामी श्रद्धानन्द की स्मृति में 'स्वामी श्रद्धानन्द महिला आश्रम' की स्थापना हुई। स्वामी श्रद्धानन्द जी के विचारों की यह एक संस्मरणीय संस्था है। इस महिला आश्रम की स्थापना में स्वामी श्रद्धानन्द की दक्षिण स्थित मालाबार यात्रा, धर्म परिवर्तन का विरोध, शुद्धि आन्दोलन व उसके पश्चात उनकी मुम्बई यात्रा आदि कारणीभूत ऐतिहासिक घटनायें हैं।

महर्षि स्वामी दयानन्द ने मुम्बई की पांच बार यात्रा की थी। उन्होंने अपनी दूसरी यात्रा में 7 अप्रैल सन् 1875 में मुम्बई के काकड़बाडी में आर्य समाज की स्थापना की थी। वहां के बुद्धिजीवियों के सम्मुख वैदिक सिद्धान्तों से सम्बन्धित प्रवचन और व्याख्यान भी दिये। परिणामतः महाराष्ट्र में भी वैदिक गर्जना की गूँज फैल गयी।

महर्षि दयानन्द के विचारों से प्रभावित हो, युवक मुंशीराम ने अपने सारे व्यसन त्याग दिये थे, इतना ही नहीं उन्होंने अपना व्यवसाय वकालत को भी ठुकरा दिया था। यह इसलिए कि वकालत और सत्य का मेल दुस्वार है। आर्य समाज की ओर उनका रूझान बढ़ा। वैदिक विचारधारा के धुन के मुंशीराम सन्यास की दीक्षा लेकर अप्रैल 1917 में स्वामी श्रद्धानन्द बन गये। वे गुरूकुल शिक्षा प्रणाली से अंत तक जुड़े रहे। इससे अधिक जुड़े रहे देश के सामाजिक प्रश्नों से।

महर्षि दयानन्द की तरह उन्होंने वैदिक प्रचार हेतु महाराष्ट्र की यात्रा की। पुणे शहर में आयोजित "महाराष्ट्र प्रान्तीय राष्ट्रीय परिषद" के अध्यक्ष पद को उन्होंने सुशोभित किया था और उनका अध्यक्षीय भाषण सामाजिक विषयों से सम्बन्धित रहा। उन्होंने अपने पुत्र इन्द्र को पत्र भेजकर राष्ट्रीय परिषद की गतिविधियों की जानकारी भी दी थी और अपनी अगली यात्रा को भी सूचित किया था। अंकोला, अमरावती की यात्रा कर वे दिल्ली लौटे थे। वे सुदूर दक्षिण में मलाबार की यात्रा कर मुम्बई शहर पहुँचे थे। उन्हें मालाबार यात्रा में हिन्दू भाईयों को धर्म परिवर्तन की दुखद घटना देखने को मिली। यह स्वामी श्रद्धानन्द के सार्वजनिक जीवन का अन्तिम अध्याय था।

स्वामी श्रद्धानन्द के अन्तिम समय में सार्वजनिक तथा राष्ट्रीय क्षेत्र में, उनमें बहुत ही निराशा उत्पन्न हुई थी। इसके मूल में अंग्रेजों की राजनीति कारणी भूत थी। अंग्रेजों ने बड़े प्रेम से मुसलमानों को थपथपाया था। हिन्दु तथा मुसलमानों को एक दूसरे से लड़ाने में उनकी राजनीति के दर्शन होते हैं। फिर क्या था देखते ही देखते देश के कोने कोने में मुसलमान दंगे मचाते रहे। दक्षिण भारत में मालाबार में दंगे हुए। वहां के मुसलमानों ने हिन्दुओं पर अनन्त अत्याचार कर धर्म परिवर्तन के लिए विवश किया था। अनेक हिन्दू महिलाओं की इज्जत लूटी गयी, उनका सुहाग सिंदुर मिट गया, उनकी गोद सूनी हुई,

कई महिलायें मुस्लिम हरम में दाखिल हुई। विवश होकर वे भी इस्लाम मजहब में परिवर्तित हुई।

स्वामी श्रद्धानन्द ने अनुभव किया कि बिना हिन्दू संगठन के आर्य हिन्दू जाति की रक्षा न हो सकेगी। उन्होंने 1923 में "शुद्धि सभा" की स्थापना की। वे स्वयं इस सभा के अध्यक्ष बनें। इस सभा के माध्यम से मुसलमान बने हिन्दुओं को, उनके अपनाये मार्ग से रोकने का प्रयास किया, जो भटककर विवश अवस्था में मुसलमान बने थे। उन्हें अपने मूल धर्म में पुनश्च वापस लाने का मार्ग उन्होंने खोला। इसी उद्देश्य से वे हिन्दुओं के संगठन को सशक्त करने में लगे रहे। उन्होंने "सेवियर ऑफ डाईंग रेस" तथा "हिन्दू संगठन" ग्रंथों की रचना की। दूसरी तरफ मुसलमान भी अधिक अग्रेसर हुए। परिणामतः अनेक दंगे हुए। कांग्रेस ने इस सब की गहराई में जाकर सच्चाई जानने के लिए श्री मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक समिति स्थापित की। अबुल कलाम आजाद इस समिति के सदस्य थे। इस समिति का निर्णय यह रहा कि स्वामी श्रद्धानन्द ही इन सब घटनाओं के मूलकारण है। अल्पसंख्यकों के तुष्टिकरण का यह एक भयानक चित्र था।

स्वामी श्रद्धानन्द अत्यधिक व्यग्र हुए। फिर भी मालाबार में घटित "मोपला कांड" घटनायें, वहां के हिन्दुओं के समाचार को प्रत्यक्ष देखने सुनने के लिए वे मालाबाद पहुंचे। अनेक पीड़ित हिन्दुओं से सम्पर्क स्थापित कर सारी बातें सुनी, घटनाओं को समझने का प्रयास किया। समूची जानकारी प्राप्त करने के बाद वे विवशता की भावना लिए 1924 वर्ष के अक्टूबर माह में मुम्बई पहुंचे और ऋषि दयानन्द द्वारा स्थापित काकड़बाड़ी -आर्य समाज में ठहरे थे।

वे मुम्बई पहुँचने के दूसरे दिन संध्या 5 बजे आर्य समाज में ही स्थानीय प्रतिष्ठित व्यक्तियों तथा बुद्धिजीवियों की एक सभा आयोजित की। आमंत्रितों में बाल गंगाधर खेर (बाद में) खेर बृहद महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री बने), मुकंदराव जयकर (बाद में पुणे विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति बनें) लक्ष्मी दास गोवर्धन दास तेजपाल, जगजीवन राम मूलजी, राजनारायण, रामेश्वर दास, जयकर की माताजी सोना जी तथा यमुनाबाई आदि ख्याति प्राप्त व्यक्ति थे। काकड़ बाड़ी- आर्य समाज के प्रधान कल्याण दास ने सब आमंत्रितों का स्वागत किया। उस समय के आर्य समाज का चित्र भी स्पष्ट होता है। आमंत्रित, प्रथम यज्ञ वेदी के समीप पहुँचे। पिछली दीवार पर केसरिया रंग से लिखा था 'अयं यज्ञो भुवनस्य नाभि' निचली पंक्ति थी 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम'। सभी लकड़ी से बनी हुई सीढियां चढ़कर पहली मंजिल पर पहुँचे। उनकी दृष्टि दानदाताओं की सूची पर पड़ी अग्रक्रम पर एक नाम था- हाजी उत्दारखान रहमतुल्ला सोनावाला। खां साहब ने 5000/- रू. की धनराशि दान में दी थी। आमंत्रितों को लगा कि ऋषिवर दयानन्द का वैदिक तत्वज्ञान मुसलमानों तक पहुँच चुका है। ऊपरी मंजिल पर अलमारियों में वेद, उपनिषद, ब्राह्मण आरण्यक, भगवद्गीता, न्यायमीमांसा आदि वैदिक सिद्धान्तों से सम्बन्धित पुस्तकें रखी

थी। एक दीवार पर आर्य समाज के दस नियम संस्कृत, हिन्दी, मराठी और गुजराती भाषा में लिखे थे।

स्वामी श्रद्धानन्द जी जिस आसन पर विराजित थे, उसकी पिछली दीवार पर लिखा हुआ था -'सर्वाणि भूतानि समीक्षे, मित्रस्य चक्षुषा समीक्षा महे'। स्वामी जी ने सबको हाथ जोड़कर अभिवादन किया और अपने मन्तव्य को प्रारम्भ किया। उन्होंने अपने मन्तव्य में 'मोपला काण्ड' को सबके सम्मुख रखा। यह प्रश्न भी उपस्थित किया कि हिन्दुओं को मुसलमानों के चुंगुल से कैसे छुड़वायें, हिन्दू संगठन को सशक्त कैसे करें। हत्याकाण्ड में हुई विधवाओं तथा निराश्रित महिलाओं को फिर से कैसे बसायें? उन्हें पूर्व जीवन की अवस्था में कैसे पहुँचाये? आमंत्रितों की प्रतिक्रिया सुनने के लिए वे रूक गये। बाला साहब खेर की प्रतिक्रिया थी कि वे भी शुद्धिकरण के पक्ष में हैं? हिन्दु धर्म की सुरक्षा होनी चाहिए पर हिन्दु धर्म की रक्षा के लिए शुद्धि कार्य एक मात्र कार्य नहीं है। उसके लिए लोक शिक्षा हो। शिक्षा के माध्यम से लोक जागृति होगी। अनिष्ट परम्पराओं पर कानून की पाबंदी हो। बेटिग ने कानूनन सती प्रथा पर रोक लगाई थी तब कहीं धार्मिक प्रश्न सुलझता गया। खेर की इस प्रतिक्रिया पर स्वामी जी ने अपनी सम्मति दर्शायी एक गंभीर समस्या पर उन्होंने जोर देते हुए कहा - बेघर, निराश्रित, परित्यक्ता, धर्म परिवर्तित महिलाओं को समाज में कैसी प्रतिष्ठा प्राप्त हो?

श्री जयकर जी की प्रतिक्रिया थी - ऐसी समस्यायें मुम्बई, पुणे जैसे शहरों में नहीं है। दूसरी प्रतिक्रिया तेजपाल की थी- जो अपनी मर्जी से धर्म परिवर्तन कर रहे है तो यह सभी प्रश्न उपस्थित नहीं हो सकते हैं। उन्होंने श्री शेषाद्री के केस का स्पष्टीकरण किया। शेषाद्रि के दो पुत्रों ने अपनी मर्जी से धर्म परिवर्तन किया था। उस समय बाला साहब जायेकर और जगन्नाथ शंकर सेठ ने मुम्बई उच्च न्यायालय के दरवाजे खटखटाये थे तब कहीं दो बंधुओं को हिन्दू धर्म में दीक्षित होने में सफलता मिली।

स्वामी श्रद्धानन्द शेषाद्रि परिवार की समस्या से परिचित थे। शेषाद्रि का एक पुत्र अल्पायु था दूसरा बालिग। दोनों पुत्रों को भावनिक आधार प्राप्त होना चाहिए था पर प्राप्त नहीं हुआ। यदि भावनिक अधिकार उन्हें प्राप्त होता तो धर्म परिवर्तन का प्रश्न उत्पन्न नहीं था। यह भी एक सामाजिक समस्या है- इसकी गहराई में जाना आवश्यक है। इसे स्वामी श्रद्धानन्द जी ने ठीक तरह से जाना था।

स्वामी जी के इस मन्तव्य के पश्चात् श्री तेजपाल ने घेंडो केशव कर्वे द्वारा पुणे में निराश्रित महिलाओं के लिए ही स्थापित आश्रम की कहानी कह दी और पंढरपुर में विगत पच्चीस वर्षो से कार्यरत आश्रम की जानकारी दी। स्वामी जी को पुणे तथा पंढरपुर के इन आश्रमों की गतिविधियों की कामना थी। कर्वे जी द्वारा स्थापित आश्रम में निराश्रित महिलायें प्रवेश पा सकती थीं किन्तु अनाथ बच्चों के लिए वहां कोई व्यवस्था नहीं थी। पंढरपुर के आश्रम में केवल गर्भवती विधवा ही प्रवेश पा सकती थीं, अन्य महिलाओं के लिए वहां कोई स्थान नहीं था।

महिला जीवन की अन्य समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए सोनू बाई ने संयुक्त परिवार में उत्पन्न अन्य प्रश्नों को भी रखा। उन प्रश्नों का समाधान ढूँढना आवश्यक है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सज्जनों द्वारा उपस्थित किये गये प्रश्नों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि महिला की विभिन्न समस्या का एक ही मार्ग है- स्थान स्थान पर महिला आश्रमों की स्थापना हो। विवेकानन्द का मानना है - निराश्रित महिलाओं के आँसू पोंछने के लिए तथा अनाथ और भूखे बच्चों के लिए व्यवस्था होना नितान्त आवश्यक है। यही धर्म है, यही ईश्वरीय कार्य है। मुंबई शहर में इस तरह के प्रयास अवश्य होने चाहिए। यह भी आवश्यक है - एक सामाजिक संस्था की और उसकी स्थापना हो। 'यत्र नार्थस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' इस श्लोक को सुनाने के बाद स्वामी जी ने अपने विचारों को विश्रान्ति दी।

स्वामी जी पूर्व की तरह ही 'शुद्धिकार्य में जुट गये। भारत के अन्य प्रांतों में भी उन्होंने शुद्धि कार्य प्रारम्भ कर दिया। उनका यह कार्य मुसलमानों को खलता गया। परिणाम वही हुआ जो होना नहीं चाहिए था। अब्दुल रसीद नामक मुसलमान युवक ने 23 दिसम्बर 1926 को स्वामी श्रद्धानन्द पर गोली चलाकर उनकी हत्या कर दी।

यह दुःखद समाचार - समूचे भारत को शोकाकुल कर दिया। यह दुखद समाचार मुंबई तक पहुँचा। वहां के आर्य सज्जन, बुद्धिजीवी, प्रतिष्ठित वर्ग शोक में डूब गया। स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा आमंत्रित सज्जनों ने एक शोक सभा का आयोजन मुम्बई के गिरगांव स्थित मारवाडी विद्यालय में किया। शोक सभा के अध्यक्ष थे श्री जयकर जी। इस शोक सभा में स्वामी जी के हत्या की दुखद घटना की निंदा की गयी। शोक सभा समाप्त हुई, पर यह समाप्ति नहीं थी- यह तो प्रारम्भ था, स्वामी जी के विचारों को पूर्ण स्वरूप देने का। दिनांक 2 3 दिसम्बर 1928 को 'सर्व कार्येषु सर्वदा शुभस्य शीघ्रम' तत्व के अनुसार श्री नप्पू के घर पर एक सभा का आयोजन किया गया। इस सभा में श्री पालकर, श्री राजनारायण लाल, बन्शीराम श्री पाद, डॉ. उदगांवकर, श्री खेर आदि महानुभाव उपस्थित थे। स्वामी श्रद्धानन्द की स्मृति में मुम्बई के मांटुगा क्षेत्र में आज भी परित्यक्ता, निराश्रित महिला तथा अनाथ बालक-बालिका को आश्रय देने को यह आश्रम खड़ा है। मुख्य द्वार पर स्वामी श्रद्धानन्द का पुतला है। यह पुतला स्वामी श्रद्धानन्द के विचारों को व्यक्त करता है।

'सत्यमेव जयते ज्ञानान्। सत्येन पन्था-विततो देवयानः।

99, भोंसले इंपायर, भोंसले नगर
पुणे- 411007
भ्रमण ध्वनि- 09421446388

मुंशीराम से स्वामी श्रद्धानन्द

(संकलनकर्त्ता-आचार्य धर्मवीर जिज्ञासु)

श्री विद्यानिधि (अथवा श्री श्रीनिधि) सिद्धान्तालंकार विद्वान् व्यक्ति हैं। चारों वेदों के व्याख्याता के रूप में प्रसिद्ध हैं। चतुर्वेद पारायण यज्ञ कराने में निष्णात हैं। वेद मंत्रों का स्पष्ट, शुद्ध, सम्यक् उच्चारण करने में पटु है। इसके साथ ही निर्भय होकर वन्य-हिंसक पशुओं का अध्ययन करते रहे हैं। वन्य जीवन के सम्बन्ध में उनकी ज्ञान पुस्तकें आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली द्वारा प्रकाशित हुई हैं। इन पुस्तकों द्वारा वे प्रशंसनीय प्रसिद्धि पा चुके हैं।

श्री विद्यानिधि जी सन् 1907 में वे गुरूकुल कांगड़ी में प्रविष्ट हुये तथा सन् 1921 में स्नातक हुए थे वे श्रद्धेय गुरू (महात्मा मुंशीराम का) स्मरण कर भाव-विभोर हो जाते हैं।

उनके गुरूकुल प्रवेश की घटना उनके पितु श्री मातु श्री गुरूकुल कांगड़ी में प्रविष्ट कराने लाये थे। आयु थी लगभग 6 वर्ष। मां कब अपने हृदय के टुकड़े की प्रसन्नता से अलग कर सकती है। पितु श्री बालक के भावी जीवन को दृष्टि में रखकर उसके निर्माण का सद्प्रयत्न करता है। माता ने कह दिया- "रात्रि भोजनोपरान्त दूध पीकर आ जाना।" बालक वासुदेव ने (उनके घर का नाम वासुदेव था) रात्रि भोजनोपरान्त दूध पीकर रोना आरम्भ कर दिया- अम्मा ने कहा था- दूध पीकर आ जाना। स्नेहसिक्त अधिष्ठाता महोदय ने बहलाने का बहुत प्रयत्न किया। दूसरे सह-अध्यायी ब्रह्मचारियों ने भी प्रलोभन दिए। पर बालक ने जो रट लगाई- "अम्मा ने कहा था, दूध पीकर आ जाना।' सो वह बन्द नहीं हुई। यह रुदन सुन महात्मा मुंशीराम भी आ गए। बालक को गोद में उठाया। पुचकारा। ममता से दुलारा। पर बालक अपनी रट से अविचलित रहा। महात्मा जी अपनी कुटिया में गए। एक सन्तरा लाए। छील-छील कर बालक को खिलाया निधि जी कहते थे कि उनका परम सौभाग्य है जो उन्होंने महात्मा जी की गोद में बैठने का पुण्य अवसर पाया। उन्होंने आगे बताया कि महात्मा जी को सन्तरा बहुत पसन्द था। वे ब्रह्मचारियों से कहा करते थे कि जब प्यास लगे तो सन्तरे का रस पिया करो। उनके समय ब्रह्मचारियों को सन्तरा आदि अनेक फल प्रचुर मात्रा में मिला करते थे।

गुरूकुल काँगड़ी के चारों ओर घना बन था। उसमें हिंसक वन्य प्राणी घूमते-घूमते गुरूकुल में भी आ जाते थे। एक बार रात्रि के दो बजे एक बघेरा गुरूकुल आ गया। तीन-चार ब्रह्मचारियों ने उसे मारने के लिए उसका पीछा किया। बघेरा भी अपनी जान बचाने हेतु भागा। वह महात्मा जी की कुटिया के चारों ओर चक्कर लगाने लगा। ब्रह्मचारी भी उसके पीछे-पीछे महात्मा जी की कुटिया के चारों ओर

उसका पीछा करते दौड़ने लगे। महात्मा जी बाहर आए। यह जान कर कि बघेरा है वे भी उनके साथ आगे-को चल पड़े। बघेरा तब तक गंगा की धार के पार जा चुका था। उसे पार जाते देखा। महात्मा जो ने पूछा-'ब्रह्मचारियों! अब क्या इरादा है?' उन्होंने स्वयं नहीं कहा कि अब पीछा करना व्यर्थ है। चलो, आश्रम चलो। न ही उन्होंने डांटा कि रात में हिंसक पशुओं का पीछा करना अच्छा नहीं। वे तो ब्रह्मचारियों की वीरता एवं साहस को चुनौती देकर बढ़ाते थे। ब्रह्मचारी स्वयं वापिस आश्रम उनके साथ आ गए।

एक दिन एक अन्य बघेरा महात्मा जी की कुटिया में आ गया। महात्मा जी कुर्सी पर बैठे थे। सामने मेज थी। जगह तंग थी। महात्मा जी एकदम जल्दी उठ न सकते थे। बघेरे ने चिक एक तरफ की और अन्दर आकर सामने खड़ा हो गया। दोनों ने एक दूसरे को भरपूर देखा। महात्मा जी ने एक छोटी सी रद्दी कागजों की भरी टोकरी उसके ऊपर .....शू कहते हुए फेंकी बघेरा चिक उठाकर भाग गया।

उस घटना की बात तुरन्त गुरूकुल में फैल गया। सभी धीरे-धीरे महात्मा जी की कुटिया पर इक्ट्ठे होने लगे। महात्मा जी के चेहरे पर भय के कुछ भी चिन्ह नहीं थे। सबको भय मुक्त करते हुए शान्त भाव से घटना बताते रहे। निधि जी छात्रावस्था में विनोद प्रिय ब्रह्मचारी थे उन्होंने विनोद की बात अत्यन्त गम्भीर स्वर में कही। महात्मा जी! बघेरा आपके पास शिकायत करने आया था।' सभी ने आश्चर्य एवं क्रोध से ब्रह्मचारी निधि की ओर देखा। अमा क्या कह रहे हो क्या यह मजाक का समय है ब्र0 निधि स्थिर शान्त बना खड़ा रहा। महात्मा जी ने पूछा- 'क्या शिकायत करने आया था ?'

निधि ने कहा-'वह यह शिकायत कर रहा था कि आपने ब्रह्मचारियों की झोपड़ियों के लिए जंगल की सारी घास कटवा ली है। अब वह कहाँ छिपे ?

महात्मा जी ने इस उत्तर को मजाक समझ टाला नहीं। गम्भीरता से लिया। तत्कालीन मुख्याधिष्ठाता श्री नन्दलाल जी को आदेश दिया कि अब जंगल की घास न काटी जाय। यह थी उनके हृदय की करूणा उन हिंसक पशुओं के लिए।

महात्मा मुंशीराम जी का सदा यह प्रयत्न रहता था कि गुरूकुल के वातावरण में सहृदयता, सौमनस्यता बनी रहे। ब्रह्मचारियों में, या गुरू वर्ग में या अन्य कार्यकर्त्ताओं में किसी प्रकार से भी विद्वेष ईर्ष्या न फैले।

एक दिन ब्रिटिश प्रधानमंत्री श्री रेक्जे मैकडानल्ड गुरूकुल पधारे। उनका स्वागत मुख्य द्वार पर किया गया। सभी अध्यापक एवं ब्रह्मचारी द्वार के दोनों ओर पंक्ति-बद्ध खड़े थे। श्री मैकडानाल्ड हाथी से

उतरे महात्मा जी ने उनकी अगवानी की और गुरूकुल के अन्दर ले आए। ब्रह्मचारियों की दृष्टि में महात्मा मुंशीराम जी का व्यक्तित्व संसार में सर्वोत्कृष्ट था। श्री रेवजे मैकडानल्ड को हाथी पर देख लगा कि वह व्यक्तित्व भी कम नहीं। जब वे हाथी से उतरे और दोनों ने परस्पर अभिवादन किया, तब भी महात्मा जी का व्यक्तित्व उत्कृष्ट था। बाद में प्रधानमंत्री ने लन्दन जाकर वहां के समाचार पत्र 'टाइम्स' में अपनी गुरूकुल यात्रा का सविस्तृत समाचार छपवाया। गुरूकुल के पवित्र वातावरण से वे बहुत प्रभावित हुए थे। सायंकालीन यज्ञ कुण्ड की अग्नि की लपलपाती हुई ज्वालाओं से ब्रह्मचारियों के शरीर की छायाएं नाचती हुई, ऐसी मनोहारी प्रतीत होती थीं, मानो स्वर्ग से पृथ्वी पर उतर कर अप्सराएं नाच रही हैं। उसी विवरण में आगे जो लिखा उससे स्पष्ट होता है कि वे महात्मा मुंशीराम जी के व्यक्तित्व से कितने अधिक प्रभावित हुए थे। वे लिखते हैं -

"अगर आप आज के युग में पूज्य एवं पवित्र क्राइस्ट (ईसा) के दर्शन करना चाहते हैं, तो भारत के गुरूकुल कांगड़ी हरद्वार में, हिमालय की रमणीय तलहटी में गंगा की पवित्रधाराओं के मध्य, सघन बनों की छाया में, हिंसक वन्य जन्तुओं के मध्य, थोड़े से शिष्यों को प्राचीन ऋषियों के रूप में निर्माण कर रहे, महात्मा मुंशीराम से मिलिये। आपकी आत्मा अद्‌भुत अनिवर्चनीय पवित्रता से आनन्दित होगी।"

काल पृष्ठ पर जगमगाता हस्ताक्षर-स्वामी श्रद्धानन्द

-राजेश गुप्त वैदिक

इतिहास साक्षी है कि जब भी किसी महापुरूष ने कोई आन्दोलन खड़ा किया या किसी संस्था/मिशन की स्थापना की तो उनके जीवनकाल में या देहावसान के उपरान्त ऐसे अनेक निष्ठावान शिष्य, अनुयायी मिलते रहे जिन्होंने पूरी लग्न के साथ उस आन्दोलन को आगे बढ़ाया, उनसे जुड़ी विचारधारा को जन-जन तक पहुँचाया। ऐसे थे महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के पाँच सर्वाधिक समर्पित, प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय अनुयायी। उनमें से स्वामी श्रद्धानन्द जी एक हैं। काल पृष्ठ पर चमकते दमकते जाज्वल्यमान पाँच हस्ताक्षर है -

1. स्वामी श्रद्धानन्द जी (1856-1926)।
2. महात्मा हंसराज जी (1864-1938)।
3. लाला लाजपत राय जी (1865-1928)।
4. पं0 गुरूदत्त जी (1865-1890)।
5. धर्मवीर पं0 लेखराम आर्य मुसाफिर (1858-1897)

आगे बढ़ने से पहले यह स्पष्ट कर दूँ कि उक्त पाँच के अतिरिक्त अन्य भी, उसी कालखण्ड में, अनेक ऐसे कृत संकल्प, दृढ़ निश्चयी महर्षि दयानन्द के अनुयायी थे जिन्होंने वैदिक धर्म (ईश्वरीय धर्म) के लिए अपना सर्वस्व आहूत कर दिया। वे सभी हमारे लिए उतने ही वंदनीय एवं अनुकरणीय हैं। किन्तु उक्त पाँच तो मैंने उनमें से चुने हैं ताकि अपने विषय को ठीक से प्रस्तुत कर सकूँ।

''स्वामी श्रद्धानन्द का जन्म सन् 1856ई0 को पंजाब प्रान्त के जालन्धर जिले के तलबन ग्राम में हुआ था। इनके जन्म का नाम बृहस्पति एवं घर का नाम मुंशीराम था। बनारस में सन् 1866 ई0 में इनकी शिक्षा प्रारम्भ हुयी। आपको नास्तिक विचारों ने उसी समय आ घेरा जब उन्हें विश्वनाथ मंदिर में इसलिए नहीं जाने दिया कि वहाँ रीवा की रानी पूजा कर रही थी। ईश्वर के दरबार में अमीर-गरीब का भेद-भाव देखकर उनके मन को ठेस पहुँची। उन्हें यह सब ढोंग, ढकोसला और पाखण्ड लगने लगा। कॉलेज की शिक्षा प्राप्त करते समय ईसाईयों के संसर्ग में आकर ईसाईयत को स्वीकार करने वाले थे कि एक दिन पादरी की अश्लील हरकत को देखकर उन्हें इसाईयत से घृणा हो गयी और वे पूर्ण नास्तिक हो गये। उनका बड़े-बड़े अमीर पुत्रों में उठना-बैठना था, उनकी संगत में मद्य-मांस का सेवन व आचारहीनता के दोष आ गये। वे पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होने लगे।

सौभाग्य से सन् 1879 ई0 में बरेली में युग प्रवर्तक, वेदोद्धारक, ब्रह्मचारी, ओजस्वी महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के प्रवचनों से वे बहुत प्रभावित हुए और प्रवचन के अन्त में शंका समाधान भी किया। महर्षि

के युक्तिपूर्ण उत्तर सुनकर वे महर्षि की ओर झुक गये। इसके बाद उनका सम्पर्क आर्य समाज के नेता लाला साईंदास से हुआ। जिन्होंने इन्हें महर्षिकृत सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने को दिया। जिसके अध्ययन से उनकी काया पलट गयी और सन् 1884 ई0 में आर्य समाज में विधिवत् प्रविष्ट हुऐ।

(2) इसके पश्चात, उन्होने सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन द्वारा महर्षि दयानन्द के आदर्शो को धारण किया और महर्षि के सपनों को साकार करने में लग गये। सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम एवं सातवें समुल्लास में ईश्वर विषयक विचार पढ़कर वे नास्तिक से पूर्ण आस्तिक बन गये।

(3) सत्यार्थ प्रकाश के दूसरे व तीसरे समुल्लास में शिक्षा एवं स्त्री सम्बन्धी विचार पढ़े। उनकी पुत्री ईसाई विद्यालय में पढ़ती थी। एक दिन उसको "ईसा ईसा बोल, तेरा क्या लगेगा मोल। ईसा मेरा राम रमैया, ईसा मेरा कृष्ण कन्हैया।।" गाते सुना तो उन्होंने उसी दिन निश्चय किया कि अपना विद्यालय होना चाहिये। और उन्होने जालन्धर में आर्य कन्या विद्यालय स्थापित किया। महर्षि दयानन्द जी की गुरूकुलीय शिक्षा प्रणाली की मूर्तरूप देने के लिए आपने अपनी धन-सम्पत्ति, संतान सब कुछ समर्पित कर दिया। वही गुरूकुल आज गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के नाम से प्रसिद्ध हो रहा है।

(4) चौथे समुल्लसास में गृहस्थाश्रम सम्बन्धी विचार पढ़े कि नारी का सम्मान करना चाहिये। उन्हें अपनी पत्नी के साथ किए उपेक्षापूर्ण व्यवहार पर बड़ी ग्लानि हुयी। अपनी गलती को स्वीकार कर वे उनको गृहलक्ष्मी मानने लगे।

(5) पाँचवे समुल्लास के अनुसरण में उन्होंने पत्नी की मृत्यु पश्चात वान प्रस्थाश्रम में प्रवेश किया और सर्वकालिक आर्य समाज के प्रचारक हो गये। और सन् 1917 ई0 को पूर्ण परिव्राजक बन श्रद्धानन्द नाम रखा।

(6) दसवें समुल्लास के अनुसरण में आपने मद्य-मांस को तिलान्जलि देकर पूर्ण सात्विक जीवन व्यतीत करने लगे।

(7) महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित्र के अध्ययन से आपको ज्ञात हुआ कि सम्पन्न परिवार होते हुऐ भी जीवन की समस्त सुख-सुविधाओं को त्यागकर हजारों कष्ट सहते हुऐ वैदिक धर्म का प्रचार किया और अन्त में 23 दिसम्बर, 1926 ई0 को मतान्ध अब्दुल रसीद नामक व्यक्ति ने उन्हे मार दिया।

(8) स्वामी श्रद्धानन्द आर्य समाज ही नहीं भारत वर्ष के उन महान राष्ट्र भक्तों में से एक ऐसे सन्यासी थे जिनका सम्पूर्ण जीवन महर्षि दयानन्द जी के चरणों में अर्पित था। उन्होंने अपना जीवन स्वाधीनता, स्वराज्य, शिक्षा और वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु समर्पित कर दिया। वे अपनी श्रद्धा व अपने अमर कार्य के लिए सदा-सदा अमर रहेंगे।

बी-182 संजय विहार, हापुड़

स्वामी श्रद्धानन्द

-डा. रूपचन्द्र दीपक

पंचनद की वीर प्रसविनी भूमि ने समय-समय पर अनेक देशभक्तों एवं क्रान्तिकारी पुरुषों को जन्म दिया है। इन वीर पुरूषों में एक नाम 'स्वामी श्रद्धानन्द' का आता है। इनका जन्म 22 फरवरी सन् 1856 को तलवन कस्बा (जालन्धर जिला) में हुआ था। सतलज नदी के तट पर यह कस्बा आबाद है। इनके बचपन का नाम 'बृहस्पति' था जो बाद में बदलकर मुंशीराम कर दिया गया। सन् 1877 में इनका विवाह शिव देवी से हुआ। बरेली में पहली बार इनकी भेंट महर्षि दयानन्द से हुई। सन् 1880 में नायब तहसीदार के पद पर नियुक्त हुए पर अपने स्वाभिमान के चलते बहुत दिन तक यह नौकरी नही कर पाये। कई धर्म, सम्प्रदायों को नजदीक से देखते हुए अन्त में इन्होंने आर्य समाज को अपनाया। इनका दाम्पत्य जीवन लगभग 14 वर्ष ही चल पाया। 31 अगस्त, 1891 को इनकी धर्मपत्नी का निधन हो गया।

महर्षि दयानन्द की अमर रचना 'सत्यार्थ प्रकाश' पढ़कर इनके जीवन की दशा और दिशा बदल गयी। 26 अगस्त 1898 को इन्होंने अपनी धर्मयात्रा शुरू की। नौ महीने में 'गुरूकुल शिक्षा' पद्धति के लिए इन्होंने 40 हजार रूपये एकत्र किये। इस अवसर पर इनको 'महात्मा' की उपाधि से विभूषित किया गया। गुरूकुल की स्थापना के लिए इन्हं हरिद्वार का कांगड़ी गाँव जो नीलधारा के तट पर स्थित है उसे नजीबाबाद (बिजनौर) के मुंशी अमन सिंह ने दान में दे दिया। इस गाँव की 1200 बीघा जमीन पर सन् 1902 में महात्मा मुंशीराम ने गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना की। जंगली जानवरों से प्रभावित इस क्षेत्र में खुले इस विद्यालय में पढ़ने के लिए कोई अपने बच्चों को नहीं भेजता था, इसलिए महात्मा मुंशीराम ने सर्वप्रथम अपने दो पुत्रों का दाखिला करवाया। इसके बाद और बच्चे आने लगे। जालन्धर की अपनी कोठी बेचकर इन्होंने गुरूकुल में और पैसा लगाया। धीरे-धीरे इस विद्यालय की ख्याति दूर-दूर तक पहुँच गयी। प्रारम्भिक 15 वर्षों तक महात्मा मुंशीराम गुरूकुल के अधिष्ठाता रहे। इस मध्य गुरूकुल देश-विदेश में ख्याति अर्जित कर चुका था। गुरूकुल कांगड़ी के कारण महात्मा मुंशीराम को आर्य समाज में एक मूर्धन्य स्थान प्राप्त हुआ। जब महात्म गांधी ने अफ्रीका में सत्याग्रह शुरू किया तो गुरूकुल के ब्रह्मचारियों ने मजदूरी करके तथा एक समय का भोजन बचाकर 1500 रूपये इकट्ठे किए और गोखले जी के मार्फत गांधी जी को भिजवाये। गांधी जी इस त्याग से इतने प्रभावित हुए कि जब वे भारत लौटे तो सर्वप्रथम इस गुरूकुल को देखने की इच्छा प्रकट की और वे वहाँ पधारे भी। इस अवसर पर महात्मा मुंशीराम ने उन्हें 'महात्मा' की उपाधि दी थी जो आजीवन उनके नाम के साथ जुड़ी रही। गांधी जी इन्हें अपना बड़ा भाई मानते थे। सन् 1917 में मुंशीराम ने परमात्मा को अपना गुरू मानते हुए स्वतः ही संन्यास की दीक्षा ली और तब से स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से जाने गये। गुरूकुल के

दायित्व से मुक्त हो अब वे राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ गये।

महात्मा गांधी द्वारा संचालित रौलट एक्ट के विरूद्ध असहयोग आन्दोलन में 30 मार्च, 1919 को राजधानी दिल्ली के एक भारी जुलूस का नेतृत्व उन्होंने किया। जब जुलूस चाँदनी चौक से गुजर रहा था तो अंग्रेज पुलिस ने उसे बल पूर्वक रोकने का प्रयास किया। तब सिपाहियों की नंगी संगीनों के सामने स्वामी श्रद्धानन्द छाती खोल कर खड़े हो गये और सिंह गर्जना की कि 'साहस हो तो मेरे सीने में संगीन घोंप दो।' डिप्टी कमिश्नर ने तत्काल वहाँ पहुँचकर इस नाजुक स्थिति को सँभाला और जुलूस आगे चल पड़ा। स्वामी श्रद्धानन्द की इस वीरता की चर्चा घर-घर में होने लगी। मुसलमान भाई यह देखकर इतने प्रभावित हुए कि उन्हें 4 अप्रैल को जामा मस्जिद और फतेहपुरी मस्जिद में ले जाकर मिम्बर (मंच) से उनके व्याख्यान कराये। सम्भवतः वह पहले हिन्दू थे जिनको ऐसा अवसर मिला। इन व्याख्यानों में वेद मन्त्रों का उच्चारण कर उन्होंने स्वदेश भक्ति, हिन्दू-मुस्लिम एकता और स्वाधीनता आन्दोलन पर अपने विचार प्रकट किये।

आपने शुद्धि आन्दोलन को सफल बनाने के लिए पंजाब के कॉलेज व गुरूकुल धड़ों को एक करने का श्लाघनीय प्रयास किया। मालाबार के हिन्दुओं पर हो रहे अत्याचारों के विरूद्ध आप लड़े। कुछ समय वे वीर सावरकर, मदन मोहन मालवीय, लाला लाजपतराय, भाई परमानन्द द्वारा स्थापित एवं संचालित हिन्दू महासभा में भी गतिशील रहे। शिक्षा के क्षेत्र में गुरूकुल शिक्षा का आन्दोलन चलाया। गुरूकुल इन्द्रप्रस्थ, गुरूकुल कुरूक्षेत्र उनकी ही देन हैं। गुरूकुल भैंसावल, गुरूकुल मटिण्डू और गुरूकुल झज्जर की आधारशिला भी उन्होंने ही रखी।

महात्मा गांधी ने स्वामी श्रद्धानन्द के शुद्धि आन्दोलन की निन्दा की थी। स्वामी श्रद्धानन्द का कहना था कि जिस दिन तबलीग आन्दोलन वापस ले लिया जायेगा मैं शुद्धि आन्दोलन बन्द कर दूँगा। इसी क्रम में 23 दिसम्बर 1926 को एक सम्प्रदाय के व्यक्ति ने अस्वस्थ चल रहे, मसनद के सहारे बैठे स्वामी श्रद्धानन्द को धोखे से तीन गोलियाँ मारकर उनकी इह लीला समाप्त कर दी। लेकिन सेवक धर्म सिंह ने उसे स्वयं एक गोली लगने के बाद भी दबोच लिया। इतने में धर्मपाल विद्यालंकार ने आकर उसे पकड़ लिया। धर्म सिंह जैसे-तैसे पंजों के बल चलकर सड़क पर पहुँचा और वहाँ से गुजर रहे लोगों को घटना की सूचना दी। जनता और पुलिस ने रंगे हाथ उस युवक को पकड़ा था, अतः अन्ततः उसे फाँसी हुई।

स्वामी जी की अन्तिम यात्रा में लगभग दो लाख व्यक्ति उनकी अर्थी के पीछे चल रहे थे जो उनकी लोकप्रियता की गवाही दे रहे थे। गांधी जी ने कहा था 'शानदार महात्मा की शानदार मौत, मुझे इस पर रश्क है।' निश्चय ही स्वामी श्रद्धानन्द ने गुरूकुल स्थापित कर वैदिक शिक्षा प्रणाली से भारतीय संस्कृति, हिन्दू धर्म और वैदिक संस्कारों को अक्षुण्ण बनाने में बहुत योगदान दिया। हिन्दू-मुस्लिम एकता, नारी उत्पीड़न रोकने और स्त्री शिक्षा की दिशा में भी उन्होंने सराहनीय प्रयास किया था। वे सदैव अभिनन्दनीय रहेंगे।

अनन्त प्रेरणा के स्रोत -

अमर बलिदानी श्रद्धानन्द

स्व. इन्द्रदेव पाठक

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था, वसुन्धरा पुण्यवती बभूव।

हे 'मीढ्वान' बादलों की तरह बरसने वाले सन्यासी! दिव्य गुण आगार, क्रान्ति के दूत, युगदृष्टा-युग पुरूष, आर्य जनता के प्राणों के प्राण, जिस जननी ने तुम्हें जन्म दिया वह जननी धन्य हो गई, जिस धरती पर तुम्हारे चरण पड़े वह धरती पवित्र हो गई। हे ऋषिवर्य की आशाओं, आकांक्षाओं की सगुण साकार प्रतिमन्त ज्वलन्त मूर्ति, आहुति देने के पूर्व तुमने कहा था-'अब तो यही इच्छा है दूसरा शरीर धारण कर शुद्धि के अधूरे कार्य को पूरा करूं, वैदिक धर्म की सेवा करूं .....'।

.... और 23 दिसम्बर, 1926 की वह भयानक शाम .... अस्ताचल की ओर बढ़ती हुई उस क्रूर काली निशा ने तुम्हारे सीने की चीरते हुए विश्व को अन्धकारमय बनाने का असफल प्रयास किया था। उसे नहीं मालूम था- शहीदों के खून से शहीद पैदा होते हैं। अगर कब्र से उठकर देखना चाहता है तो देख ले, आज घर-घर में हमारा प्यारा श्रद्धानन्द विराजमान है। शुद्धि का डंका बज रहा है, छुआछूत का नामोनिशां मिट गया है, ओ3म् की पताका लिये उसके दीवाने घर-घर में श्रद्धासमन्वित यज्ञ की सुरभ सौरभ मादकता बिखेर रहे हैं। आनन्द की वर्षा हो रही है।

पाठक वृन्द!

आज उस अमर हुतात्मा का बलिदान दिवस है। वे पवित्र वेद वाणी में वर्णित सर्वतोमुखी क्रान्ति के ज्वलन्त प्रतीक थे। वीरता, धीरता, गम्भीरता उनका सहज गुण था। उनके चमत्कारों व्यक्तित्व को उजागर करने वाले प्रेरक प्रसंग आप इस आर्य पत्रिका में पढ़ेंगे, आप देखेंगे के क्षितिज पर ऐसा महान् क्रान्तिकारी, जिसने व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के प्रत्येक क्षेत्र में क्रान्ति का बिगुल बजाया हो, युगों युगों के बाद ही सम्भव है- 'सम्भवामि युगे युगे'। जिस समय ब्रिटिश साम्राज्यशाही के दरिन्दों ने देहली के चांदनी चौक में बायनेटों को उनके सामने किया तो उन्होंने सीना खोलकर कहा था - 'हिम्मत हो तो चलाओं गोली .... सीना खुला हुआ है'। भारतीय संस्कृति के महान शत्रु लार्ड मंकाले की कलुषित शिक्षा प्रणाली का मुँहतोड़ उत्तर देते हुए प्राचीन आर्ष पद्धति पर पवित्र गंगा तट पर गुरूकुल काँगड़ो की स्थापना की - जो आज भी उनके शिक्षा के प्रति असीम अनुराग को प्रकट करती है। जाति बन्धन तोड़कर गुण कर्मों के आधार पर विवाह पूर्वजों की अनमोल विरासत, एक दो नहीं सैकड़ों हजारों लाल, जो गोरक्षक से गोभक्षक बने हुए थे, शुद्धि का पीयूष पिलाकर फिर उन्हें वैदिक धर्म में दीक्षित कर लिया।

ऋषियों के अनूठे व्यक्तित्व और शिक्षाप्रद भाषण को सुनकर जिस युवा मुंशीराम का असंयमित आचार हीन जीवन प्रभु के प्रेम में दीवाना हो गया, आचार की ऊँचाइयों को लांघता हुआ महान से महानतम बन गया- उस बलिदानी वीर की कहानियां अकथ हैं, आर्य जाति के इतिहास में अविस्मरणीय और स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य हैं।

आज हमारा राष्ट्र संकट की घड़ी में है। विघटन और आतंक की आग में झुलस रहा है। निर्दोष मां बहिनों का सुहाग, बच्चों के सिर की छाया, बूढ़े माता पिताओं की लाठी एक मिनट में छीन ली जाती है। हत्या और अराजकता यह ताण्डव हमें उस बर्बर युग की याद दिला देता है जब इन्सान, इन्सान को इन्सान नहीं समझता था। ऐसे समय में उस वीरवर की आत्मा को जगाना होगा हमें और आपको, आर्यसमाज को, जगाना होगा, हम वही सीना खोल कर उन क्रूर हाथों को शान्त करना चाहते हैं जो निर्दोषों के खून के प्यासे बने हुए उन्मत्त हो गये हैं।

आर्यसमाज एक क्रान्तिकारी अभियान है अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध अपने को आहूत कर देना हमने अपना सौभाग्य समझा है हमारी यही परम्परा है और यही हमारी श्रृंखला। हमारे इस रहनुमा का बलिदान सत्य और धर्म की बलिबेदी पर हुआ था- वह सत्य और धर्म जो शाश्वत है, नित्य है, कल्याणकारी है। जीवन तो आता जाता रहता है, परन्तु ऋषिवर्य के शब्दों में -

'न्यायात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः'

धीर पुरुष कभी भी न्याय के मार्ग से विचलित नहीं होते। आर्य समाज अपने प्रातः स्मरणीय हुतात्माओं की राह पर चलने के लिए कृत संकल्प तथा कटिबद्ध है। आज हमारी उस महान आत्मा के प्रति यही सच्ची श्रद्धाँजलि है। आइए, हम सब कुछ भूलकर-भुलाकर एक दूसरे को सहयोग दें प्यार दें, मिलकर उनके अधूरे कार्यों को पूरा करने का व्रत लें, तभी तो -

लोग कहते हैं, बदलता है जमाना अक्सर।
आर्य वह हैं, जो जमाने को बदल देते हैं।।

23 दिसम्बर जिनकी पुण्य तिथि है-

स्वाधीनता संग्राम के अजेय सेनानी स्वामी श्रद्धानन्द

-आर्येन्दु अवस्थी

स्वाधीनता संग्राम के सेनानियों का स्मरण आते ही अग्रिम पंक्ति में एक अप्रतिम प्रतिभा उभर कर सामने आती है जिसे पहले महात्मा मुंशीराम एवं बाद में स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से जाना गया।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को मोहनदास कर्मचन्द गांधी से महात्मा गांधी का सम्मानित पद प्रदान करने वाले उस दिव्य पुरूष स्वामी श्रद्धानन्द जिन्हें महात्मा गांधी बड़े भाई के रूप में सदा सम्मान देते रहे-का बलिदान दिवस 23 दिसम्बर, 1926 हमारे लिए महान प्रेरणा स्फुरण का दिन है। इसी दिन उस दिव्य पुरूष को धर्मान्ध अब्दुल रशीद ने-प्यासा बनकर पानी पिलाने का बहाना करके धोखे से गोलियों से मारकर हमसे सदा-सदा के लिए छीन लिया था।

वीर मरा नहीं करते। जीवन मरण के रूप में काया परिवर्तन तो सृष्टि क्रम है। दिव्य पुरूषों के हर जीवन की हर श्वास अनुकरणीय होती है। स्वामी श्रद्धानन्द जी का शरीर निश्चय ही हमारे मध्य नहीं है परन्तु उनका ज्वलन्त जीवन दर्शन सदैव प्रकाश की किरणें देता हुआ हमारा मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। आइये उनके जीवन के एकाध प्रेरक प्रसंग हम स्मरण करके उनसे प्रेरणा लेने का व्रत लें।

स्वामी श्रद्धानन्द का पूर्व नाम मुंशीराम था वे पूरी तरह से अंग्रेजियत में सने थे, अनेकों अवगुणों से युक्त उनका नास्तिक जीवन महर्षि-स्वामी दयानन्द सरस्वती के तर्क, गवेषणापूर्ण भाषण, वेदों का वैज्ञानिक विवेचन सुनकर एकदम से ही पलट गया। सभी दूषणों का सर्वथा परित्याग करके वे महर्षि के परम भक्त बन गये। महात्मा हो गये।

एक बार महात्मा मुंशीराम अपने परिवार में बैठे थे उनकी पुत्री वेदवती जो एक कान्वेण्ट स्कूल में पढ़ती थी-''ईसाईसा बोल तेरा-क्या लगेगा मोल, ईशा मेरा राम-रमैय्या, ईशा मेरा कृष्ण कन्हैया अपनी बाल सुलभ मुद्रा में गा रही थी। महात्मा जी का अन्तर मन विचलित हो गया कि यह ईसाईयत का बीज तो बड़ी ही सहजता से जन-जन में बोने की कुत्सित योजना कारगर ढंग से चलाई जा रही है। बस उसी दिन से उन्होंने बालिका को कान्वेण्ट स्कूल में पढ़ने भेजना-बन्द करके भारतीय पद्धति की शिक्षण की व्यवस्था की चिन्तना की और तत्काल ला0 देवराज प्रधान आर्यसमाज जांलधर सं मंत्रणा करके पुत्री पाठशाला खोला। महर्षि दयानन्द की सुस्पष्ट भावना थी कि भारत माता को पराधीनता से मुक्त कराके सदैव सुखी सम्पन्न रखने का एक मात्र उपाय गुरूकुल शिक्षा प्रणाली ही है। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने

गुरूकुल शिक्षा प्रणाली के प्रचार-प्रसार के लिये गुरूकुल की स्थापना गंगा के तट पर पर्वत माला के मध्य हरिद्वार के निकट की (यही बाद में गुरूकुल कांगड़ी - विश्वविद्यालय के नाम से विख्यात हुआ और अनेकों दिग्गज विभूतियों का प्रणेता बना।) सर्वप्रथम महात्मा मुंशीराम ने अपने ही दो पुत्रों हरिश्चन्द्र व इन्द्र का उक्त गुरूकुल में प्रवेश दिलाकर-मनसा वाचा कर्मणा ऋषि मन्तव्यों के प्रति अपना समर्पण दर्शाया। प्रसिद्ध विद्वान पं0 इन्द्र विद्या वाचस्पति महात्मा मुंशीराम के पुत्र एव गुरूकुल कांगड़ी के प्रथम वरिष्ठ स्नातकों में थे।

एक बार कतिपय स्वार्थी तत्वों ने जो गुरूकुल-व्यवस्थापिका समिति के सदस्य थे, स्वामी जी पर '' जिन्होंने अपनी पारिवारिक वम्पत्ति भी गुरूकुल के लिये स्वाहा कर दी थी'' गुरूकुल के कुछ धन के हड़पने का लाँछन-लगाया। समिति की बैठक हुई उनके प्रति अटूट निष्ठा और विश्वास रखने वाले सवस्य बड़े ही चिन्तित थे। स्वामी जी ने बैठक में उस विषय पर पूर्णतया मौन धारण कर लिया। उनके विरूद्ध लाया गया प्रस्ताव भारी-बहुमत से अस्वीकार कर दिया गया परन्तु समिति की बैठक के बाद सदस्यों ने जिन्हें स्वामी जी पर पूर्ण विश्वास था कहा स्वामी जी आपने इस दोष का खुलासा न करके जान बूझकर दोषियों को बचाया, ऐसा क्यों ?स्वामी जी ने बड़ी ही गम्भीरता से उत्तर दिया- यदि इस सत्य-का खुलासा हो जाता तो हमारे कई एक कर्मठ साथी (जिन्होंने किसी कारण यह दोष किया) हमसे सदा-सदा के लिये अलग हो जाते, फिर संस्था की इससे भी कई गुना अधिक क्षति होती। मेरे मौन रहने से वह अपूरणीय क्षति बच गई।

स्वराज्य आंदोलन तीव्र गति पर था, दिल्ली में आंदोलनकारियों का जुलूस निकला, जुलूस का-नेतृत्व भगवावस्त्रधारी स्वामी श्रद्धानन्द कर रहे थे, जामा मस्जिद के निकट संगीनधारी गोरी फौज ने रास्ता रोका, उस निर्भय सन्यासी ने सिंह गर्जना की-छाती खोलकर - फौज को ललकारा-हिम्मत हो चलाओं गोलिया। हमारे शरीर के खून का एक-एक कतरा तुम्हारी अंग्रेजी सल्तनत को जड़ मूल से नष्ट करने के लिए आग में घी सदृश होगा। गोरी-पल्टन की संगीने झुक गयीं। यह पहले आर्य सन्यासी थे-जिन्होंने जामा मस्जिद पर वेद मन्त्रों के पाठ के साथ स्वाधीनता संग्राम का उत्प्रेरक भाषण किया, जिसे मुसलमानों ने भी बड़ी ही श्रद्धा से सुना। जामा मस्जिद की प्राचीर से किया गया उनका उद्घोष अन्ततः अपना रंग लाया, भारत से अंग्रेजों को भागने के लिए विवश होना पड़ा।

ईसाई और मुसलमान मजहबियों द्वारा बलात्--भय दिखाकर प्रलोभन देकर भोली-भाली भारत की जनता को ईसाई मुसलमान बनाने का कार्य तीव्रगति पर होता देख स्वामी जी को महान् चिन्ता हुई-

क्योंकि उस समय मजहब बदलने वाला सदा-सदा के लिये अपनों से बेगाना बन जाता था-- स्वामी जी ने शुद्धि आंदोलन आरम्भ किया और निर्भय होकर विधर्मियों के चंगुल में फंसने से बचने के आह्वान के साथ-साथ बिछुड़ों को पुनः वापस लाकर गले लगाने शुद्ध कर वैदिक धर्म में लौटाने का प्रबल आँदोलन छेड़ा।

कांग्रेस वर्किंग कमेटी में मुस्लिम ईसाई तुष्टीकरण की नीति से क्षुब्ध होकर कांग्रेस से त्यागपत्र देकर-- स्वामी जी ने हिन्दू महासभा की स्थापना करके हिन्दू -- हित रक्षण की प्रबल आवाज उठाई।

स्वामी श्रद्धानन्द जी धर्म, संस्कृति सभ्यता और मानवता की संरक्षा का संकल्प लेकर बढ़े थे, अनेकशः कठिनाइयो, आपदाओं का मुकाबला करते हुये, बढ़ते-गये, बढ़ते गये और अन्ततः उसी के लिये बलिदान हो गये ।

23 दिसम्बर-उनके उस उदात्त चरित्र को अपना कर-देश जाति धर्म के लिये जीवन्त जीवन-जीने का संकल्प दिवस है। आइये आज हम सभी व्रत लें सबकी उन्नति में अपनी उन्नति देखते हुये, भारत-माता पर छाये अविद्या अन्धकार विदेशी मानसिकता, अंग्रेजियत के प्रवल प्रभाव, वर्गभेद, असहिष्णुता और अनाचार, बढ़ते भ्रष्टाचार और नारी शोषण की दुष्प्रवृत्ति का सर्वथा समापन करके भारतीय संस्कृति भारतीय दर्शन-भारतीय सभ्यता प्रेम स्नेह सौहार्द्र का प्रचार-प्रसार करके अपने राष्ट्र को सुख समृद्धि से सुसम्पन्न बनाने के लिए मनसा वाचा कर्मणा समर्पित होंगे।

-वेद मन्दिर,
479, हिन्दनगर, लखनऊ

बलिवेदी के अमर शहीद-स्वामी श्रद्धानन्द

डा0 सुनीता शास्त्री

अमर शहीद-स्वामी श्रद्धानन्द वास्तव में लौहपुरुष थे, जो स्वामी दयानन्द जैसे पारस के संसर्ग से विद्वता, त्यागशीलता, कर्मनिष्ठा सहनशीलता आदि गुण सहज प्राप्त कर स्वर्णमय हो गये।

स्वामी श्रद्धानन्द ने चाँदनी चौक में गोरों की संगीनीं के समक्ष जब अपनी छाती खोलकर निर्भीक स्वर में कहा-- ''देश की जनता पर प्रहार करने से पूर्व उन्हें सन्यासी की छाती को छलनी बनाना पड़ेगा।''

तब इनको निर्भीकता और देश प्रेम को देखकर पं0 जवाहरलाल नेहरू ने कहा था --

''वे निर्भीकता और साहस की प्रतिमा है।'' स्वामी जी ने जीवन के हर क्षेत्र में कड़ा संघर्ष किया चाहे वह सामाजिक हो चाहे राजनैतिक और धार्मिक। ये अपनी पारिवारिक स्थिति से भी सन्तुष्ट न थे। सरकारी अफसर के पुत्र होने के कारण अंग्रेज परिवारों से प्रभावित थे। ये अंग्रेजी में जैसी स्त्री के सपने देख रहे थे विवाह के पश्चात् मन से बहुत दुःखी हुये। इनका मन विद्रोह की आग में जलने लगा। इन्होंने अपनी विद्रोही प्रवृत्ति को सामाजिक उत्थान और आन्दोलन में बदल दिया। इनको पत्नी पढ़ी लिखी न थी, इन्होंने पत्नी शिथदेवी को सुशिक्षिता बनाने का बड़ा प्रयत्न किया। स्त्री शिक्षा व प्रचार में उनसे सहयोग की आशा रखते थे। परन्तु विधाता विमुख ही रहा और 31 अगस्त 1891 की शाम 5 बजे उनकी पत्नी का देहान्त हो गया। शिवदेवी 10 वर्षीय वेद कुमारी, 6 वर्षीय अमृतकला, 4 वर्षीय हरिश्चन्द्र और 2 वर्षीय बालक इन्द्र को मुंशी जी को सौंप गयीं। परिजनों ने पुनर्विवाह के लिए दबाव डाला परन्तु इन्होंने अस्वीकार कर मातृत्व भार को भी स्वयं ही संभाला । जो इनकी सचरित्रता और अथक् साहस का प्रतीक है। क्योंकि ये बरेली के कोतवाल साहब के सबसे छोटे लाड़-प्यार में बिगड़े हुये निर्भव प्रकृति के पुत्र थे। जिससे इनके अन्दर कुछ सामालिक दोष भी आ गये थे। इन्होंने अपनी आत्म-कथा ''कल्याण पथ का पथिक'' में स्वयं कहा है। --'' इसमें सन्देह नहीं कि मेरी गिरावट की कहानियां बहुत से श्रद्धालु हृदयों को ठेस लगायेगीं परन्तु मुझे यह विश्वास है कि इस आत्मकथा के पाठ से बहुत से युवकों को संसार यात्रा में ठोकरों से बचने की शक्ति मिलेगी।''

इनके पिता पौराणिक कर्मकाण्डों के पक्षपाती थे। पिता की नौकरी के स्थानान्तरण के कारण ये गंगा स्नान, मूर्तिपूजा, मठ-मठान्तर आदि के खोखले आडम्बर को देखकर नास्तिक हो गये थे लेकिन स्वामी दयानन्द के प्रथम भाषण मात्र से ही आस्तिक बन गये। बाद में इनके पिता भी वैदिक सिद्धान्तों की और आकृष्ट हुये।

शताब्दी के प्रारम्भ 1902 में हरिद्वार में गंगा के पवित्र तट पर गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना की। गुरूकुल शिक्षा से स्वामी जी विद्यार्थी के वास्तविक जीवन निर्माण के शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक और चारित्रिक सम्यक, विकास को आदर्शरूप में निखरा हुआ देखना चाहते थे।

गुरूकुल के जन्म से विरोधों का सामना करना पड़ा इसके लिये स्वामी जी ने सपना सर्वस्व बलिदान कर दिया प्रारम्भ में अपने दोनों पुत्रों को अर्पित किया। सम्वत् 1959 अपना सम्पूर्ण पुस्तकालय भेंट किया। सं0 1964 में संद्धर्भ प्रचारक प्रेस दिया। जालन्धर की कोठी बेंच कर सं0 1968 में वार्षिकोत्सव में रूपये भेंट दिये, जबकि स्वयं दूसरों के 36000 के ऋणी थे और स्वयं निस्वार्थ सेवा करते थे। स्वामी जी ने 17 वर्ष तक आचार्य और मुख्याधिष्ठाता के पद पर कार्य किया। आपका स्वास्थ्य अथक् परिश्रम के कारण बिगड़ने लगा। सं0 1965 में हार्निया का आप्रेशन हुआ। साथ ही ब्रिटिश सरकार की कड़ी दृष्टि भी लगी रहती थी। वह गुरूकुल को क्रान्तिकारियों का एकांत स्थल मानती थी प्रतिनिधि सभा में इनके विरूद्ध एक दल ने गबन का आरोप लगाया जिससे किसी सार्वजनिक संस्था का अधिकारी न बन सके। यह सब आरोप अन्ततः मिथ्या ही रहे जैसे चन्द्रमा पर धूल फेंकने पर भी उसकी शीतल कान्ति प्रभाव हीन नहीं होती। उसी प्रकार स्वामी जी भी शान्त भाव से सब सहकर दीप्तिमान रहे, वह कहते थे-- '' सिद्धांतों से समझौता ने करने की वृत्ति उनकी सफलता का मूल है।''

ये गांधी जी के सिद्धांतों को भी मानते थे, जब गांधी जी दक्षिण अफ्रीका से भारत आये तो उन्हें गुरूकुल में आमन्त्रित किया। गांधी जी भारतीय शिक्षा संस्कृति और स्वदेशीय भावना से ओत-प्रोत, सचरित्रता के सागर इस शिक्षण स्थल को देखकर हत्प्रभ रह गये।

हिन्दी भाषा के क्षेत्र में भी सर्वप्रथम स्वामी जी ने ही हिन्दी साहित्य सम्मेलन भागलपुर में हिन्दी को मातृभाषा पुकारा, सं0 1919 में अमृतसर कांग्रेस में स्वागत भाषण भी हिन्दी में दिया। जालन्धर से प्रकाशित होने वाला 'संद्धर्भ प्रचारक' पत्र को हिन्दी में निकलवाना प्रारम्भ किया, विजय, अर्जुन और सत्यवादी, पत्र अपने संक्षरण में प्रसारित कराये, स्वामी जी सम्पूर्ण जीवन हिन्दी भाषा की सेवा में प्रयत्नशील रहे।

वास्तव में स्वामी जी, ने जीवन, समाज और राष्ट्र के हरक्षेत्र में अपना अमूल्य योगदान दिया वह बहुमुखी प्रतिभा के धनी के साथ महादानी और बलिदानी भी थे।

अमर शहीद, स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती

'नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन'

14 श्रावण संवत् 1936 के दिन स्वामी दयानन्द बांसबरेली पधारे। 3 भाद्रपद को चले गये। स्वामी महाराज के पहुँचते ही कोतवाल साहब को हुकम मिला, कि पण्डित दयानन्द सरस्वती के व्याख्यानों के अन्दर फिसाद को रोकने का बन्दोबस्त कर दें। पिताजी स्वयं सभा में गये और स्वामी जी महाराज के व्याख्यानों से ऐसे प्रभावित हुए कि उनके सत्संग में मुझ नास्तिक की संशयनिवृत्ति का उन्हें विश्वास हो गया। रात को घर आते ही मुझे कहा- 'बेटा मुंशीराम! एक दण्डी सन्यासी आए हैं, बड़े विद्वान और योगीराज हैं। उनकी वक्तृता सुनकर तुम्हारे संशय दूर हो जायेंगे। कल मेरे साथ चलना।' उत्तर में कह तो दिया कि चलूँगा परन्तु मन में वही भाव रहा कि केवल संस्कृत जानने वाला साधु बुद्धि की बात क्या करेगा। दूसरे दिन बेगम बाग की कोठी में पिताजी के साथ पहुँचा जहाँ व्याख्यान हो रहा था। उस दिव्य आदित्य मूर्ति को देख श्रद्धा उत्पन्न हुई, परन्तु जब पादरी टी0के0 स्कॉट और दो-तीन अन्य यूरोपियन को उत्सुकता से बैठे देखा तो श्रद्धा और भी बढ़ी। अभी दस मिनट वक्तृता नहीं सुनी थी कि मन में विचार किया- 'यह विचित्र व्यक्ति है कि केवल संस्कृतज्ञ होते हुए ऐसी युक्तियुक्त बातें करता है कि विद्वान् दंग हो जायें।' व्याख्यान परमात्मा के निज नाम ओ3म् पर था। वह पहले दिन का आत्मिक आनन्द कभी भूल नहीं सकता। नास्तिक रहते हुए भी आत्मिक आह्लाद में निमग्न कर देना ऋषि आत्मा का ही काम था।

उसी दिन दण्डी स्वामी से निवेदन किया गया कि टाउन हाल मिल गया है, इसलिए कल से व्याख्यान वहाँ शुरू होंगे। स्वामी जी ने उच्च स्वर से कह दिया कि सवारी समय पर पहुँच जाया करेगी तो वह तैयार मिलेंगे।

टाउनहाल में जब तक 'नमस्ते', 'पोप', 'पुराणी', 'जैनी', 'किरानी', 'कुरानी' इत्यादि परिभाषाओं का अर्थ बतलाते रहे तब तक तो पिताजी श्रद्धा से सुनते रहे, परन्तु जब मूर्तिपूजा और ईश्वर अवतार का खण्डन होने लगा तो जहाँ एक ओर मेरी श्रद्धा बढ़ने लगी वहाँ पिता जी ने तो आना बन्द कर दिया और एक अपने मातहत थानेदार की ड्यूटी लगा दी। 24 अगस्त की शाम तक मेरा समय विभाग यह रहा कि दिन का भोजन करके दोपहर को ही बेगम की कोठी पहुँच ड्योढ़ी पर बैठ जाता। 2 और 4 बजे के बीच में जब ऋषि का दरबार लगता तो आज्ञा होते ही जो पहला मनुष्य आचार्य ऋषि को प्रणाम करता वह मैं था। प्रश्नोंत्तर होते रहते और मैं उनका आनन्द लेता रहता। व्याख्यान के बाद 20 मिनट तक सब दरबारी विदा हो जाते और आचार्य चलने की तैयारी कर लेते। मैं अपनी वेगनट पर सीधा टाउनहाल पहुँचना।

व्याख्यान का आनन्द उठाकर उस समय तक घर न लौटता जब तक कि आचार्य दयानन्द की बग्घी उनके डेरे की ओर न चल देती। 25, 26, 27 अगस्त को ऋषि दयानन्द के पादरी स्कॉट के साथ तीन शास्त्रार्थ हुए। विषय प्रथम दिवस पुनर्जन्म, द्वितीय दिन ईश्वरतार और तीसरे दिन यह था कि मनुष्य के पाप के बिना फल भुगते क्षमा किये जाते हैं या नहीं। पहले दो दिन लेखकों में मैं भी था। परन्तु दूसरी रात को मुझे सन्निपातज्वर हो गया और फिर आचार्य दयानन्द के दर्शन मैं न कर सका। 30 श्रावण से 9 भाद्रपद (15 से 15 अगस्त) तक ऋषि जीवनसम्बन्धी उनकी घटनाएँ मैंने देखीं जिनमें से उन्हीं कुछ एक को यहाँ लिखूंगा जिनका प्रभाव मुझ पर ऐसा पड़ा कि (वे) अब तक मेरी आँखों के सामने घूम रही हैं।

मुझे आचार्य दयानन्द के सेवकों से मालूम हुआ कि वह नित्य प्रातः शौच से निवृत्त होकर, केवल कौपीन पहने लट्ठ हाथ में लिये तीन बजे बाहर निकल जाते हैं और छह बजे लौटकर आते हैं। मैंने निश्चय किया कि उनका पीछा करके देखना चाहिए कि बाहर वह क्या करते हैं। 'दबदबै-कैसरी' अखबार के एडिटर भी मेरे साथ हो लिये। ठीक तीन बजे बाहर निकलकर आचार्य चल दिये। हम पीछे हो लिये। पाव मील धीरे-धीरे चलकर वह इस तेजी से चले कि मुझसा शीघ्रगामी जवान भी उन्हें निगाह में न रख सका। आगे तीन मार्ग फटते थे। हमें कुछ पता न लगा कि किधर गये। दूसरे प्रातः काल हम अढ़ाई बजे से ही घात में उस जगह छिपकर जा बैठे जहाँ से तीन मार्ग फटते थे। उस विशाल मूर्ति को आते देखकर हम भागने को तैयार हो गये, वह तेज चलते थे और मैं पीछे भाग रहा था। मेरे पीछे बनिये एडिटर भी लुढ़कते-लुढ़कते आ रहे थे। बीच में एक-आध मील दौड़ भी रूद्र स्वामी ने लगाई। परन्तु वहाँ मैदान था मैंने भी उनको आँख से ओझल न होने दिया। अन्त में पाव मील धीरे-धीरे चलकर एक पीपल के वृक्ष तले बैठ गये। घड़ी से मिलाया तो पूरे डेढ़ घण्टे आसन जमाये समाधि में स्थित रहे। प्राणायाम करते नहीं प्रतीत हुए, आसन जमाते ही समाधि लग गयी। उठकर दो अंगड़ाइयाँ लीं और टहलते हुए अपने तत्कालीन आश्रम की ओर चल दिए।

एक शनिचर के व्याख्यान के पीछे श्रोतागण को बतलाया गया कि दूसरे दिन (आदित्यवर को) नियत समय से एक घण्टा पहले व्याख्यान शुरू होगा। आचार्य ने उसी समय कह दिया कि यदि सवारी एक घण्टा पहले पहुँचेगी तो मैं उसी समय चलने को तैयार रहूँगा। आदित्यवार को लोग पिछले समय से डेढ़ घण्टे पहले ही जमा होने लगे। हाल (व्याख्यान भवन) खचाखच भर गया परन्तु आचार्य न पहुँचे। पाव घण्टा, आधा घण्टा भी बीत गया परन्तु बग्घी की घड़घड़ाहट न सुनायी दी। पौन घण्टा पीछे ऋषि दयानन्द की विशाल मूर्ति उन्हीं वस्त्रों से अलंकृत जो उनके चित्र में दिखाये जाते हैं, ऊपर चढ़ती दिखाई दी। मध्य की डाट के नीचे वाली एक ओर की दीवार में सोटा टेककर, ईश्वर प्रार्थना के लिए बैठने से पूर्व उन्होंने कहा-'' मैं समय पर तैयार था। परन्तु सवारी न आई। बहुत प्रतीक्षा के पीछे पैदल

चल दिया। मार्ग में पिछले नियत समय पर ही सवारी मिली। इसलिए देरी हो गई। सभ्य पुरूषों! मेरा कुछ दोष नहीं है। दोष बच्चों के बच्चों का है जो प्रतिज्ञा करके पालन करना नहीं जानते।'' यह संकेत खजांची लक्ष्मीनारायण की ओर था जिनके अतिथि होकर उनकी बेगम बागवाली कोठी में स्वामी दयानन्द रहते थे। बाबू लक्ष्मीनारायण सरकारी पाँचों खजानों के खजांची थी और बरेली में उस समय करोड़पति समझे जाते थे।

एक व्याख्यान में वह पौराणिक असम्भव तथा आचार भ्रष्ट कहानियों का खण्डन कर रहे थे। उस समय पादरी स्कॉट, मिस्टर एडवार्ड्स कमिश्नर, मिस्टर रीट कलेक्टर, 15 वा 20 अंग्रेजों सहित उपस्थित थे। आचार्य ने अन्य कहानियों ने पंचकुवारियों की कल्पना कर कटाक्ष किया और एक से अधिक पति रखने वाली द्रौपदी, तारा, मन्दोदरी आदि के किस्से सुनाकर श्रोतागण के धार्मिक भावों की अपील की। स्वामी जी के कथन में हास्यास्पद अधिक होता था, इसलिए श्रोतागण थकते न थे। साहब लोग हँसते और आनन्द लूटते रहे। फिर आचार्य बोले-''पुरानियों की तो यह लीला है, अब किरानियों की लीला सुनो। यह ऐसे भ्रष्ट हैं कि कुमारी के पुत्र उत्पन्न होना बतलाते, फिर दोष सर्वज्ञ शुद्ध स्वरूप परमात्मा पर लगाते और ऐसा पाप करते हुए तनिक भी लज्जित नहीं होते।'' इतना सुनते ही कमिश्नर और कलेक्टर के मुँह क्रोध के मारे लाल हो गये परन्तु आचार्य का भाषण उसी बल से चलता रहा और अन्त तक ईसाई मत का ही खण्डन होता रहा।

दूसरे दिन प्रातः काल ही खजांची लक्ष्मीनारायण को कमिश्नर साहब के यहाँ से बुलावा आया। साहब ने कहा-अपने पण्डित स्वामी को समझा दो कि सख्ती से काम न लिया करे। हम ईसाई तो सभ्य हैं, वाद-विवाद की सखती से नहीं घबराते परन्तु यदि जाहिल हिन्दू मुसलमान भड़क उठे तो तुम्हारे पण्डित स्वामी के व्याख्यान बन्द हो जायेंगे।'' खजांची जी यह सन्देश आचार्य तक पहुँचाने की प्रतिज्ञा करके लौटे। खजांची जी चाहते थे कि बात छेड़ने वाला कोई अन्य मिल जाये जिससे वह आचार्य की झाड़ से कुछ-कुछ बच जायें। जब कोई खड़ा न हुआ तो मुझ नास्तिक को आगे किया गया। परन्तु मैंने यह कहकर अपना पीड़ा छुड़ाया कि खजांची साहब कुछ कहना चाहते हैं, क्योंकि कमिश्नर साहब ने उनको बुलाया था। अब सारी मुसीबत खजांची जी पर टूट पड़ी। खजांची साहब कहीं सिर खुजाते हैं, कहीं गला साफ करते हैं। पाँच मिनट तक आश्चर्ययुक्त रहकर आचार्य बोले- ''भाई, तुम्हारा तो कोई काम करने का समय ही नियत नहीं, तुम समय के मूल्य को नहीं समझते। मेरे लिए समय अमूल्य है। जो कुछ कहना हो कह दो।'' इस पर खजांची जी बोले-''महाराज! अगर सख्ती न की जाये तो क्या हर्ज है? असर भी अच्छा पड़ता है। अंग्रेजों को नाराज करना भी अच्छा नहीं।'', इत्यादि-इत्यादि। बड़ी कठिनाई से अटक-अटक कर ये वचन गरीब के मुँह से निकले। महाराज हँसे और कहा- 'अरे! बात क्या

थी जिसके लिए गिड़गिड़ाता है। मेरा इतना समय भी नष्ट किया। साहब ने कहा होगा तुम्हारा पण्डित कड़ा बोलता है,' व्याख्यान बन्द हो जायेंगे, यह होगा वह होगा। अरे भाई! मैं हौवा तो नहीं कि तुझे खा लूँगा उसने तुझे से कहा, तू सीधा मुझ को कह देता। व्यर्थ इतना समय क्यों गँवाया।'' एक विश्वासी पौराणिक हिन्दू बैठा था, बोला-''देखो! यह तो कोई अवतार हैं, मन की बात जान लेते हैं।''

उस शाम के व्याख्यान को कौन सुनने वाला भूल सकता है ?मैंने बड़े-बड़े वाग्विशारदों के व्याख्यान सुने हैं परन्तु जो तेज आचार्य के उस दिन के सीधे-सीधे शब्दों से निकलकर सारी सभा को उत्तेजित कर गया उसके साथ किसकी उपमा दूँ। उस दिन आत्मा के स्वरूप पर व्याख्यान था। पूर्व दिवस के सब अंग्रेज पादरी स्कॉट के अतिरिक्त उपस्थित थे। व्याख्यान में सत्य के बल का विषय आया। सत्य की व्याख्या करते हुए आचार्य ने कहा - ''लोग कहते हैं कि सत्य को प्रकट न करो, कलेक्टर क्रोधित होगा, अप्रसन्न हो, गवर्नर पीड़ा देगा। अरे! चक्रवर्ती राजा भी क्यों न अप्रसन्न हो, हम तो सत्य ही कहेंगे।'' इसके पीछे एक श्लोक पढ़कर आत्मा की स्तुति की। न शस्त्र उसे काट सके, न आग उसे जला सके, न पानी उसे गला सके और न हवा उसे सूखा सके वह नित्य अमर है। फिर गरजते शब्दों में बोले-''यह शरीर तो अनित्य है, इसकी रक्षा में प्रवृत होकर अधर्म करना व्यर्थ है। इसे जिस मनुष्य का जी चाहे नाश कर दे।'' फिर चारों ओर तीक्ष्ण दृष्टि डालकर सिंहनाद करते हुए कहा-''किन्तु वह शूरवीर पुरूष मुझे दिखाओं जो मेरी आत्मा का नाश करने का दावा करे। जब तक ऐसा वीर इस संसार में दिखाई नहीं देता तब तक मैं यह सोचने के लिए तैयार नहीं कि मैं सत्य को दबाऊँगा वा नहीं।'' सारे हाल में सन्नाटा छा गया। रूमाल का गिरना भी सुनायी देता था।

व्याख्यान में कुछ देर हो गई थी। उठते ही ऋषि दयानन्द ने पूछा-''भक्त स्कॉट आज दिखाई नहीं दिये।'' पादरी साहब किसी व्याख्यान से भी अनुपस्थित न होते थे, और अलग भी प्रेम वार्तालाप किया करते थे, इसलिए ऋषि दयानन्द को उनसे बड़ा प्रेम हो गया था। किसी ने कहा-''पास के गिरजे (चेपल) में आज उनका व्याख्यान था।'' सीढ़ियों के नीचे उतरते ही ऋषि ने कहा- ''चलो, भक्त स्कॉट का गिरजा देख आवें।'' अभी तीन-चार सौ आदमी खड़े थे। वह सारी भीड़ लेकर गिरजा पहुँच। वहाँ व्याख्यान समाप्त हो चुका था। श्रोता सौ के लगभग थे। पादरी साहब नीचे उतर आये, स्वामी जी को वेदी (पुलपिट) पर ले गये और कहा कि कुछ उपदेश दीजिए। आचार्य ने खड़े-खड़े ही बीस मिनट तक मनुष्य पूजा का खण्डन किया।

एक दिन आचार्य को पता लगा कि खजांची जी का सम्बन्ध किसी वेश्या से है। उनके आने पर पूछा-''तुम्हारा वर्ण क्या है ?''उन्होंने कहा-''क्या कहँ आप तो गुण कर्मानुसार व्यवस्था मानते हैं।'' आचार्य बोले - ''यो तो सब वर्णसंकर हैं परन्तु तुम जन्म के क्या हो ?''

उत्तर मिला - ''खत्री।''

महाराज बोले - ''यदि खत्री के वीर्य से वेश्या में पुत्र उत्पन्न हो तो उसे क्या कहोगे ?'' खजांची ने सिर नीचा कर लिया।

इस पर महाराज ने कहा- ''सुनो भाई! हम किसी का मुलाहजा नहीं करते। हम तो सत्य ही कहेंगे।'' खजांची जी ने उस वेश्या को कहीं अन्यत्र भिजवा दिया।

एक अन्तिम घटना के साथ इस अपूर्व सत्संग की कथा समाप्त करता हूँ। यद्यपि आचार्य दयानन्द के उपदेशों ने मुझे मोहित कर लिया था तथापि मैं मन में सोचा करता था कि यदि ईश्वर और वेद के ढकोसले को पण्डित दयानन्द स्वामी तिलांजलि दे दें तो फिर कोई भी विद्वान उनकी अपूर्व युक्ति और तर्कनाशक्ति का सामना करने वाला न रहे। मुझे अपने नास्तिकपन का उन दिनों अभिमान था। एक दिन ईश्वर के अस्तित्व पर आक्षेप कर डाले। पाँच मिनट के प्रश्नोंत्तर में ऐसा घिर गया कि जिह्वा पर मुहर लग गई।

मैंने कहा-''महाराज! आपकी तर्कना बड़ी तीक्ष्ण है। आपने मुझे चुप तो करा दिया, परन्तु यह विश्वास नहीं दिलाया कि परमेश्वर की कोई हस्ती (अस्तित्व) है।'' दूसरी बार फिर पूरी तैयारी करके गया।, परन्तु परिणाम पूर्ववत् ही निकला। तीसरी बार पूरी तैयारी करके गया, परन्तु मेरे तर्क को फिर पछाड़ मिली।

मैंने फिर अन्तिम उत्तर वही दिया-''महाराज! आपकी तर्कनाशक्ति बड़ी प्रबल है, आपने मुझे चुप तो करा दिया, परन्तु यह विश्वास नहीं दिलाया कि परमेश्वर की कोई हस्ती है।''

महाराज पहले हँसे, फिर गम्भीर स्वर में कहा-''देखो। तुमने प्रश्न किये, मैंने उत्तर दिये-यह युक्ति की बात थी। मैंने कब प्रतिज्ञा की थी कि मैं तुम्हारा विश्वास परमेश्वर पर करा दूँगा। तुम्हारा परमेश्वर पर विश्वास उस समय होगा जब वह प्रभु स्वयं तुम्हें विश्वासी बना देंगे।'' अब स्मरण आता है कि नीचे लिखा उपनिषद् वाक्य उन्होंने पढ़ा था -

'नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।'
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनुं स्वाम।।' -कठ0 2।2।22

- 'कल्याण मार्ग का पथिक' से साभार

योग के साधकों को आश्वासन

स्व. प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

महर्षि पतंजलि ने अपने योगदर्शन में योग के आठ अंग बताये है 1. यम 2. नियम 3. आसन 4. प्राणायाम 5. प्रत्याहार 6. धारणा 7. ध्यान और 8. समाधि। इनमें प्रथम के चार यम, नियम, आसन और प्राणायाम बहिरंग योग कहलाते हैं। अन्त के चार प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अन्तरंग योग हैं।

यम पांच प्रकार के होते हैं- "तत्र हिसासत्यास्तेयब्रह्मचर्या परिग्रहा यमाः।।" यह योगदर्शन का वचन हैं।

अर्थात् अहिंसा वैराग्य, सत्य ही मानना, सत्य ही बोलना और सत्य ही करना। अस्तेय अर्थात् मन, कर्म, वचन से चोरी त्याग ब्रह्मचर्य अर्थात् उपस्थेन्द्रिय का संयम। अपरिग्रह अर्थात् अत्यन्त लोलुपता, स्वत्वाभिमानरहित होना, इन पांच यमों का सेवन सदा करें। नियम- "शौच सन्तोष तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।।" यह योग शास्त्र का वचन है।

शौच अर्थात् स्नानादि से पवित्रता, सन्तोष - सम्यक प्रसन्न होकर निरूद्यम रहना सन्तोष नहीं किन्तु पुरूषार्थ जितना हो सके उतना करना,हानि-लाभ में हर्ष या शोक न करना, तप- अर्थात् कष्टसेवन से भी धर्मयुक्त कर्मो का अनुष्ठान, स्वाध्याय- पढ़ना-पढ़ाना, ईश्वर की भक्ति विशेष से आत्मा को अर्पित रखना ये पांच नियम कहाते हैं।

यमों के बिना केवल इन दस नियमों का सेवन न करें,किंतु इन दोनों का सेवन किया करें। जो यमों का सेवन छोड़ के केवल नियमों का सेवन करता है वह उन्नति को प्राप्त नहीं होता, किंतु अधोगति अर्थात् संसार में गिरा रहता है। इस तथ्य के समर्थन में निम्नलिखित मनुस्मृति का श्लोक देखने योग्य है-

"यमान् सेवेत सततं न नियमान् केवलान् बुधः।
यमान्पत्यकुर्वाणों नियमान् केवलान् भजन्।।"

यम और नियम जीने के महत्वपूर्ण अंग है, इनके अभाव में योग की साधना असम्भव है। यहां एक और सच्चाई ध्यान में रखनी चाहिये कि सदाचारी गृहस्थ भी योग की साधना आराम से कर सकता है। योग का तीसरा अंग है आसन। योगदर्शन का सूत्र है-

"स्थिरसुखमासनम्"- योग साधना के लिये लम्बे समय तक स्थिर होकर सुखपूर्वक बैठना। योग साधना के लिये मुख्य रूप से सिद्धासन, पद्मासन व सुखासन बताये जाते हैं। आसन के सम्बन्ध में मुख्य बात यह है कि दोनों पुठ्ठे समान रूप से आसन पर स्थित हो, कमर में जहाँ त्रिकास्थि है वहां से मेरूदण्ड गर्दन तक सीधा रहे। इससे इडा, पिंड्गला और सुषुम्ना तीनों नाड़ियां खुली रहे और प्राणों का आवागमन होता रहे। साधना के लिए इतना ही आसन पर्याप्त हैं।

योग का चतुर्थ अंग है प्राणायाम। प्राणायाम में प्राणों को श्वास से दोनों नथुनों से बाहर निकालकर रोकना, पायु और मूल को संकुचित करना लाभकारी है। अधिक देर बाह्यवृत्ति अर्थात् बाहर रोकना उत्तम है।

स्वाभाविक रूप से श्वास अन्दर लेकर थोड़ा रोककर फिर बाहर रोकना मूल पायु का संकोच करना लाभकारी है। इसमें इडा, पिंगला और सुषुम्ना तीनों खुलकर सक्रिय हो जाती है और साधना में सहयोग मिलता है।

यम नियम आसन और प्राणायाम ये चारों बहिरंग है। प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अन्तरंग योग हैं। प्रत्याहार का अर्थ है कि ज्ञानेन्द्रियों को बाह्य विषयों से अन्तर्मुखी करके परमेश्वर में ध्यान लगाना। भगवान ने आँख, कान, नाक आदि ज्ञानेन्द्रियों को बहिर्मुखी बनाया है। इसीलिए वे बाहर के विषयों को आसानी से ग्रहण कर लेती हैं उन्हें अन्तर्मुखी करके परमेश्वर के गुण, चिन्तन में लगाना प्रत्याहार है, इसीलिए योगसाधना के समय आँखे अधखुली बन्द कर लेते हैं। कई लोग कानों में रूई का फाहा भी लगा लेते हैं। इससे बाहर के दृश्य, शब्द आदि नहीं सुनाई पड़ते। अन्तरंग योग का द्वितीय साधन "धारणा" है। धारणा की परिभाषा है- "देशबन्धचित्तस्यधारणा।" चित्त को किसी एक स्थान पर बांध देना। कई लोग दीपक की लौ पर भी धारणा करते हैं। किन्तु परमेश्वर की धारणा के लिए हृदय पुण्डरीक दोनों छातियों के बीच में खाली जगह पर नसिकाग्र दोनों भौंहो के बीच में आज्ञा चक्र पर और सिर में सहस्रार (जहां खोपड़ी में पिलपिला है) उत्तम स्थान है।

इसके पश्चात् ध्यान का क्रम आता है। योग दर्शन में कहा है- "तत्रैयिकतानता ध्यानम्" धारणा को एकरस बनाये रखना, कोई विच्छेद न होने देना ध्यान है। ध्यान में परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का निरन्तर चिन्तन करते रहना उचित है। इसका पूर्ण अभ्यास हो जाने पर समाधि लग जाती है। समाधि में सब कुछ भूल जाता है। ध्यान करने वाला अपने को भी भूल जाता है, मैं ध्यान कर रहा हूँ यह भी भूल जाता है। केवल परमेश्वर का चिन्तन मात्र ही ध्यान में रह जाता है। समाधि भी सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात दो तरह की होती है। इस समय समाधि के इन दोनों भेदों को अब छोड़ रहें हैं, यह साधना का ऊँचा विषय है। योग साधना में समाधि तक पहुँचना अनेक जन्मों में सिद्ध हो पाता है।

अर्जुन ने गीता में श्री कृष्ण से पूछा है यदि कोई मनुष्य योग साधना करता करता भटक जाये तो उसकी क्या गति होती है- "अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः।

अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति।।"

अर्जुन बोले- हे! श्री कृष्ण जो योग में श्रद्धा रखने वाला है किंतु संयमी नहीं है, इस कारण जिसका मन अन्तकाल में योग से विचलित हो गया है, ऐसा साधक योग की सिद्धि को अर्थात् भगवत्साक्षात्कार को न प्राप्त होकर किस गति को प्राप्त होता हैं?

श्री कृष्ण जी उत्तर देते हैं कि योग का मार्ग कल्याण का मार्ग है। योग के मार्ग पर चलने वाले की कभी दुर्गति नहीं होती। गीता में श्रीकृष्ण के आश्वासन ध्यान देने योग्य है-

"पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते।

न हि कल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति।।"

श्री भगवान बोले- हे पार्थ! उस पुरूष का न तो इस लोक में नाश होता है और न परलोक में ही। क्योंकि हे प्यारे! आत्मोद्धार के लिए अर्थात् भगवत्प्राप्ति के लिये कर्म करने वाला कोई भी मनुष्य दुर्गति को प्राप्त नहीं

होता।

"प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचिनां श्रीमतां गेहे योग भ्रष्टोऽभिजायते।।"

योगभ्रष्ट पुरुष पुण्यवानों के लोकों को अर्थात् स्वर्गादि उत्तम लोको को प्राप्त होकर, उनमें बहुत वर्षो तक निवास करके फिर शुद्ध आचरण वाले श्रीमान् पुरुषों के घर जन्म लेता है। अथवा वैराग्यवान उन लोकों में न जाकर ज्ञानवान् योगियों के ही कुल में जन्म लेता है। परन्तु इस प्रकार का जो जन्म है सो संसार में निःसन्देह अत्यन्त दुर्लभ है।

"तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पोर्वदेहिकम्।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन।।"

वहां उस पहले शरीर में संग्रह किये हुए बुद्धि संयोग को अर्थात् समबुद्धिरूप योग के संस्कारों को अनायास ही प्राप्त हो जाता है ओर हे कुरूनन्दन! उसके प्रभाव से वह फिर परमात्मा की प्रतिरूप सिद्धि के लिये पहले से भी बढ़कर प्रयत्न करता है।

"पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्द ब्रह्मातिवर्तते।।"

वह श्रीमानों के घर में जन्म लेने वाला योगभ्रष्ट पराधीन हुआ भी उस पहले के अभ्यास से ही निःसन्देह भगवान् की ओर आकर्षित किया जाता है, तथा समबुद्धिरूप योग का जिज्ञासु भी वेद में कहे हुए सकाम कर्मो के फल को उल्लंघन कर जाता है।

"प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्विषः।
अनेक जन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्।।"

परन्तु प्रयत्नपूर्वक अभ्यास करने वाला योगी तो पिछले अनेक जन्मों के संस्कार के बल से इसी जन्म में संसिद्ध होकर सम्पूर्ण पापों से रहित हो फिर तत्काल ही परमगति को प्राप्त हो जाता है।

इस सबका यही आशय है कि मनुष्य को जहां तक सुयोग सुविधा मिले, शरीर साथ दे, परमेश्वर के साक्षात्कार के लिये योगसाधना अवश्य करते रहना चाहिये।

"ईशावास्यम्"
कालिन्दी हाउसिंग स्टेट
कोलकाता।

समर्पित सिपाही - स्वामी श्रद्धानन्द

राजकरनी अरोड़ा

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द की गणना उन महापुरूषों में होती है जिन्होंने महर्षि दयानन्द के मिशन को पूरा करने में अपना सर्वस्य होम कर दिया, सिर धड़ की बाजी लगा दी। दयानन्द के मानसपुत्र, अग्नि पुरूष, शान्त ज्वालामुखी, क्रांतिकारी सन्यासी, विद्रोही सन्त, अछूतोद्धारक, स्त्री शिक्षा के प्रचारक, प्रखर राष्ट्रवादी, विद्वान, योगी, वीतराग सन्यासी, प्रचण्ड योद्धा, अनुभवी नेता, बहुमुखी प्रतिभा के धनी, सत्यनिष्ठ, ईश्वर विश्वासी, निर्भीक, स्वाभिमानी, आदर्श, आचार्य, छात्रवत्सल, एकता के सूत्रधार, दृढ़-सिद्धान्तवादी, सर्वस्य समर्पणकर्ता स्वामी श्रद्धानन्द धर्मवीर, कर्मवीर व दानवीर थे। वे मनुजता का मान, ऋषियों की आन, शूरता की शान और भारत भू का अभिमान थे। स्वाधीनचेता अमर बलिदानी, त्यागी, तपस्वी, युग-पुरूष, अग्रणी नेता, गुरूकुल शिक्षा प्रणाली के पुरोधा और स्वतंत्रता सेनानी अमर बलिदानी थे उनकी जीवन गाथा जितनी रोचक है, उतनी ही रोमांचक भी है। इनका जन्म फरवरी 1856 में एक प्रसिद्ध सम्पन्न ईश्वर परायण खत्री घराने में श्री नानक चन्द्र के घर हुआ। जन्म का नाम बृहस्पति था, बाद में मुंशीराम के नाम से पुकारा गया। अंतिम और छठीं सन्तान होने के कारण बचपन खूब लाड़ प्यार में बीता। यज्ञोपवीतोपरांत प्रारम्भिक शिक्षा बनारस में हुई। पुलिस इन्सपेक्टर पिता के बार बार स्थानान्तरण के कारण नियमित और व्यवस्थित रूप से शिक्षा न चल पाई, क्वीन्स कालेज में एंट्रेस करने के उपरांत इलाहाबाद के मेयो कालेज में प्रवेश लिया। यही पं. मोतीलाल नेहरू से मित्रता हुई। बनारस में ही इनके अन्दर रागात्मक वृत्तियों और कलात्मक अभिरूचियों का विकास हो चुका था। साहित्यिक अध्ययन भी खूब किया। लाहौर में वकालत की अंतिम परीक्षा पास की। 21 वर्ष की आयु में प्रसिद्ध रईस और साहूकार राय सालिगग्राम की सुपुत्री श्रीमती शिवदेवी से विवाह हुआ। 1891 में यह देवी स्वर्ग सिधार गयी और इस प्रकार केवल 35 वर्ष की आयु में ही मुंशीराम पर पारिवारिक संकट आ पड़ा। दो पुत्र और दो पुत्रियों के पिता मुंशीराम पर मां का भी दायित्व आ पड़ा। युवावस्था, धन दौलत-ऐश्वर्य सब कुछ होते हुए भी उन्होंने दूसरा विवाह नहीं किया। तप त्याग पूर्वक छोटे-छोटे बच्चों का पालन किया, उन्हें मातृ स्नेह भी दिया और पिता का संरक्षण-परिपालन भी। इसी त्याग-तपस्या ने इन्हें आगे चलकर गुरूकुल का स्नेहिल सफल आचार्य, अधिष्ठाता और कुलपति भी बना दिया।

मुंशीराम की जीवन गाथा प्रमाण है कैसे महर्षि दयानन्द के स्निग्ध सान्निध्य रूपी पारस ने भोग विलास में लिप्त उच्छृंखल मुंशीराम रूपी लोहे को स्वर्ण बना दिया। जिस महर्षि के एक वाक्य ने

अमीचन्द को हीरा बना दिया, उनके एक साक्षात्कार ने पुलिसया सिपाही लेखराम को सन्त रक्त साक्षी आर्यवीर मुसाफिर अमर शहीद बना दिया, एक धैर्य युक्त मुस्कराते मुख की झलक ने नास्तिक गुरूदत्त को ईश्वर भक्त आस्तिक बना दिया, उसी तरह बरेली में सन् 1879 में पधारे स्वामी दयानन्द के प्रवचनों ने मुंशीराम को महात्मा मुंशीराम और फिर स्वामी श्रद्धानन्द बना दिया। सभी शंकाओं का उच्छेदन हो गया, सभी दुर्गुण दुर्व्यसनों का खात्मा हो गया। ''सत्यार्थ प्रकाश'' के अध्यपनानुशीलन ने जीवन का कायाकल्प कर दिया। लाहौर में बच्छोवाली आर्य समाज में प्रवेश एक ऐतिहासिक दस्तावेज बन गया। समाज के प्रधान लाला साईदास के शब्दों में इस नई स्पिरट ने वैदिक सिद्धान्तों की धूम मचा दी। उत्सव, अधिवेशन, जलसे, जुलूस, प्रवचन, उपदेश, वेद-कथा, शास्त्रार्थ ने पंजाब और पंजाब से बाहर की आर्य समाज की धाक जमा दी। समाज में फैली कुरीतियों- बाल विवाह, विधवा विवाह, जाति पाति, अस्पृश्यता, नारी शिक्षा, पर्दा प्रथा आदि के समूलोच्छेदन में इस वीर ने कमर कस ली। एतदर्थ समाज के विरोधी विपक्षियों की ओर से सामाजिक बहिष्कार की धमकियों का साहस से सामना किया। और इस्लाम द्वारा धर्मान्तरण और आर्य जाति पर होने वाले आक्रमणों का डटकर मुकाबला किया।

असीम साहस, अपूर्व लगन, अनोखे त्याग, अटल निश्चय, अटूट इच्छा-शक्ति, अनन्त धैर्य से आने वाली बाधाओं का मुकाबला किया। धुन के पक्के मुंशीराम हर बात को तर्क की कसौटी पर कसते थे। विवेक से तुरन्त निर्णय लेने की क्षमता उनके व्यक्तित्व की विशेषता थी। विपरीत परिस्थितियों से जूझते हुये अपनी राह बना लेना उनका स्वभाव था। ऋषि द्वारा निर्दिष्ट गुरूकुल शिक्षा प्रणाली का पुनरूद्धार करने के लिए गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना उनके दृढ़ निश्चय और प्रबल इच्छा-शक्ति का प्रमाण है। हिमालय की शैवालिक की पहाड़ियों से घिरे कांगड़ी गांव के शान्त प्राकृतिक और सात्विक वातावरण में इस गुरूकुल के छात्रों में धार्मिक भावना, देश प्रेम, धर्मरक्षण, श्रद्धा, आत्म-विश्वास, वैदिक सिद्धान्तों के प्रति आस्था कूट कूट कर भरी जाती थी, इनमें भक्ति भावना, बलिदान का जज्बा भरपूर था। जोशीले धर्मपारायण व्यक्तियों का दल तैयार करने का यह सर्वोत्तम साधन था। अंग्रेज सरकार के लिए यह एक खतरे की घंटी थी। आगे चलकर इस गुरूकुल ने राष्ट्रीय जागरण में महती भूमिका अदा की। कई वर्ष तक तो इस गुरूकुल पर अंग्रेजों की कोप दृष्टि रही। उन्हें गुरूकुल की दीवारों के पीछे देशद्रोह की गंध आती थी। इस पर कड़ी निगरानी रखी जाती थी। इसे बागियों का अड्डा समझा जाता था। एक गुप्तचर रिपोर्ट में तो इसे सरकार के लिए शाश्वत खतरे का स्रोत और अज्ञात खतरे का मूल बताया गया। अधिकारियों का यहां तांता लगा रहता था। 1916 में भारत के वायसराय तथा गवर्नर

जनरल लार्ड चैम्सफोर्ड गुरूकुल में पधारें वे अत्यन्त प्रभावित हुए। उसके बाद वक्र दृष्टि शान्त हुई और निरीक्षकों का तांता खत्म हुआ। अब यह गुरूकुल राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संस्था (विश्वविद्यालय) बन गई। इसके बाद और भी कई स्थानों पर गुरूकुल स्थापित किए गए। गुरूकुल इन्द्रप्रस्थ खूब प्रगति पर है।

सर्वमेधयज्ञ-समाज सुधार और शिक्षा प्रसार हेतु अपना सारा जीवन तो समर्पित किया ही सर्व हुतात्मा महात्मा मुंशीराम ने अपने दोनों पुत्रों को सबसे पहले गुरूकुल कांगड़ी में प्रवेश दिया, फिर अपनी प्रैस, समस्त अर्जित सम्पत्ति जालन्धर वाली कोठी भी गुरूकुल को दान कर दी। कन्याओं की शिक्षा को प्रोत्साहन हेतु जालन्धर कन्या महाविद्यालय और देहरादून का कन्या गुरूकुल इनकी कीर्ति पताका को बुलन्द किए हुए है। इनके त्याग, तपस्या के भव्य स्मारक है। नारी जाति उत्थान, अछूतोद्धार, दलितोत्थान में इनकी सेवाएं चिरस्मरणीय है। आगरा, भरतपुर, मथुरा के आस पास पांच लाख मल्कान राजपूतों का गंगाजल से शुद्धिकरण करके बिछुडें भाईयों को गले मिलवाया। जिस गुरूकुल के लिए सर्वस्य अर्पित किया अन्त में उसे भी छोड़ दिया और 1917 में सन्यास लेकर स्वामी श्रद्धानन्द नाम पाया। धन्य है वह हरिद्वार की माया वाटिका जिसमें सन्यास लेकर अब वह मानव मात्र की सेवा हेतु समर्पित हो गये। पूरा देश इनका कार्य क्षेत्र बन गया। अब सारा संसार इनका परिवार था। 1918 में गढ़वाल में अकाल पीड़ितों की सेवा सहायता में जुटे। 1918 में ही इनका राजनीति में प्रवेश हुआ, जो एक क्रान्तिकारी घटना सिद्ध हुई। रोलट एक्ट के विरोध में 30 मार्च 1919 में चालीस हजार सत्याग्रही विशाल जन समूह का नेतृत्व भगवाधारी इस आर्य नेता ने किया। इनकी हुंकार सिंह गर्जना -''निर्दोषों का खून बहाने से पहले मेरे सीने में गोली मारो'' सुनकर गोरखा सैनिकों की संगीने झुक गयी। दिल्ली टाउन हाल के मैदान में गोलियों के सामने सीना देखकर इस वीरता निर्भीकता पर कौन मुग्ध न हुआ होगा? उस समय दिल्ली में स्वामी श्रद्धानन्द की धाक थी, महात्मा गांधी, डॉ. अन्सारी, और अजमल खान स्वामी जी की आवाज को बहुत महत्व देते थे। 4 अप्रैल 1919 में जामा मस्जिद की वेदी पर पहले और अंतिम गैर मुस्लिम नेता के रूप में वेद मंत्रों की ध्वनि प्रतिगुंजित की हिन्दू मुस्लिम एकता का संदेश दिया। इससे ये अजात शत्रु बन गये मानव से महामानव बन गये। वे सच्चे अर्थो में पंथ निरपेक्ष थे, राष्ट्रीय एकता के सबल प्रतीक थे। जालियांवाला बाग के नरसंहार के कारण क्षत विक्षत पंजाब में सन् 1919 दिसम्बर में कांग्रेस के अधिवेशन का सफल संचालन करके पंजाब के लोगों का मनोबल बढ़ाया। उनमें आशा की जीवन ज्योति जलाई वीरता की दीपशिखा प्रज्ज्वलित की। हिन्दी में दिया गया

स्वागत भाषण उनकी सच्चाई, उच्चता, सत्यप्रियता, वीरता और निर्भीकता का नमूना था।

1922 में अमृतसर में अकाल तख्त पर सिक्खों की मांगो के समर्थन में दिया गया भाषण और परिणामस्वरूप रावलपिंडी जेल में रहना उनके साहस, सौहार्द और राष्ट्रीय एकता का ज्वलंत उदाहरण है। 1924 में महर्षि दयानन्द की जन्म शताब्दी का भव्य समारोह स्वामी श्रद्धानन्द के नेतृत्व में सफलतापूर्वक मनाया गया। स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन को स्वस्थ मोड़ देने में तीन प्रमुख तत्व है- 1. महर्षि दयानन्द का बरेली में 1879 में साक्षात्कार और मुंशीराम को दिये गये प्रवचन उपदेश 2. पत्नी श्रीमती शिवदेव की पतिनिष्ठा, अनूठी सेवा और आर्य संस्कृति के प्रति उनकी आस्था। 3. ''सत्यार्थ प्रकाश'' का अध्ययनानुशीलन और उस पर आचरण।

महात्मा गांधी स्वामी जी को अपना बड़ा भाई मानते थे, उनके शब्दों में ''स्वामी श्रद्धानन्द कर्मवीर थे, श्रद्धा, सत्य और वीरता के प्रतीक थे। रैम्जे मैक्डानल जो बाद में ब्रिटिश गर्वनमेंट के प्रधानमंत्री बने ने गुरूकुल कांगड़ी में स्वामी जी से भेंट की थी। इंग्लैंड वापिस जाने पर कहा था- ''यदि वर्तमान काल को कोई कलाकार ईसा की मूर्ति बनाने के लिए जीवित माडल सामने रखना चाहे तो मैं इस भव्य मूर्ति महात्मा मुंशीराम की तरफ इशारा करूँगा।'' कोई मध्यकालीन चित्रकार पीटर के चित्र के लिए नमूना मांगेगा तो मैं इस जीवित मूर्ति के दर्शन की प्रेरणा करूँगा''।

23 दिसम्बर 1926 का मनहूस दिन - साम्प्रदायिक सौहार्द के लिए जीवन भर लड़ने वाला सेनानी, मानवता का रखवाला, साम्प्रदायिक उन्माद का निवाला बन गया। एक मदान्ध पर मजहबी जनून सवार हुआ। रूग्णशैया पर पड़े स्वामी श्रद्धानन्द का सीना गोलियों से छलनी कर दिया। गांधी जी के शब्दों में शानदार जीवन का शानदार अन्त हुआ। चारों ओर घृणा, भय और आतंक का अंधकार छा गया। सचमुच इतिहास में वह दिन पीड़ा और क्षोभ का था। भारत रोया, दिल्ली रोई, दिल्ली की गलियां रोई, कूचे रोये। 25 दिसम्बर 1926 को विशाल जुलुस निकला- विशाल जनसमूह बड़े बड़े सम्राटों को रिझाने वाला मीलों तक नरमुंड-नरमुंड ही दिखाई देते थे। लाहौरी गेट से आरम्भ हुई यात्रा चांदनी चौक के मुख्य मार्गो से होती हुई दोपहर बाद यमुना नदी के किनारे पहुंची। अपने हृदय सम्राट के नश्वर शरीर को अग्नि के सुपुर्द करके जन समूह अपने घरों को इस प्रकार लौटा जैसे उनका सर्वस्य लुट गया हो। फिजां में शायर के शब्द गूंज रहे थे-

मौत ऐसी हो तो नसीबों में क्या रखा है जीवन में, और ऐ मौत! अगर आकर खामोश कर गयी तू, सदियों दिलों के अन्दर हम गूंजते रहेंगे।'' लाला लाजपत राय इस तरह फूट पड़े- ''श्रद्धानन्द तुमने मुझे

शिकस्त दे दी, मेरे नसीब में ऐसी मौत कहाँ? सचमुच आज आर्य समाज ही नहीं सारा भारत सूना और असहाय हो गया है। सचमुच स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान सदियों तक देशवासियों के लिए प्रेरणा और स्फूर्ति का स्रोत बना रहेगा।

हम प्रतिवर्ष स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान दिवस मनाते हैं जोश और जज़्बे के साथ। एक ज्वलंत प्रश्न हमारे सामने है- क्या हम जलसे-जुलूसों तक ही सीमित रहेंगे? क्या आज परिस्थितियां बदली हैं? आज की मानवता की छाती पर दानवता का नर्तन हो रहा है। आज भी धर्मोन्माद की आग को निर्दोषों के खून से बुझाया जा रहा है। आतंकवाद, उग्रवाद, नक्सलवाद के रूप में हिंसा, घृणा, वैमनस्य से वातावरण विषाक्त हो रहा है। यह आग बड़वानल, दावानल के रूप में फैले उससे पहले ही इसे नेस्तनाबूद करना होगा, खेद है कि राजनीति के सौदागर पन्थ निरपेक्षता, तुष्टीकरण, राजनैतिक विडम्बना के कारण राष्ट्रीय अस्मिता का सौदा कर रहे हैं। धर्मान्तरण का चक्र अब भी जारी है। षडयन्त्र अब भी पल रहे हैं, कुचक्र अब भी चल रहे हैं। हमारी आंखे कब खुलेंगी? जिन मूल्यों, आदर्शो, सिद्धान्तों के लिए स्वामी जी ने बलिदान दिया, उसकी रक्षा से हम कब तक किनारा करते रहेंगे?

दे रहा है आदमी का दर्द, अब आवाज दर-दर
अब न सम्भले तो कहो, सारा जमाना क्या कहेगा?
जब बहारों को खड़ा नीलाम पतझड़ कर रहा है,
हम नहीं फिर भी जगे तो आशियाना क्या कहेगा?

ए-15/बी नेहरू ग्राउंड, न्यू टाऊन (एन.जे.टी.)
खरीदाबाद-121001

अतीत के पृष्ठों से जो आज भी विचारणीय है-

क्या हम गांधी जी के रास्ते पर चल रहे हैं ?

प्रायः कहा जाता है कि हम राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं। किसी भी विशेष अवसर पर जब गांधी जी का स्मरण होता है तब राजपुरुष यही कहते हैं – हम गांधी जी से प्रेरणा लेकर अपने देश का सर्वोन्मुखी विकास करना चाहते हैं। अभी दो सप्ताह पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा था कि हम महात्मा गांधी जी के रास्ते पर चल रहे हैं। हम उनके बताये रास्ते पर चल कर अपने देश को एक मजबूत राष्ट्र बनाने का यत्न कर रहे हैं।

भारत में समय–समय पर विदेशों से जो राजपुरुष, विशिष्ट व्यक्ति और राजदूत आदि आते हैं और वे गांधी जी की समाधि पर पुष्प चढ़ाने के लिए जाते हैं तब भी हमारे राजपुरुष गांधी जी का स्मरण करते हुए यही कहते हैं कि हमारा देश गांधी जी के मार्ग पर चल रहा है।

परन्तु हमें देखना यह है कि क्या हम सचमुच गांधी जी के रास्ते पर चल रहे हैं या उस रास्ते से भटक गये हैं। गांधी जी के पवित्र नाम का सहारा लेकर जिस समय भारत ने स्वतंत्र होकर अपने देश के निर्माण कार्य का भार सम्भाला उस समय की विचारधारा और आज की विचारधारा में किसी प्रकार का सामंजस्य नहीं दिखाई दे रहा। यह ठीक है, देश की परिस्थितियां समय के अनुसार बदलती रहती हैं, परन्तु परिस्थितियों के साथ ध्येय और उद्देश्य में अन्तर नहीं आना चाहिये। आज राष्ट्र को समुन्नत करने का जो ध्येय सरकार ने बना लिया है वह मेरे विचार से गांधी जी के रास्ते के सर्वथा विपरीत है। आज राष्ट्र की बढ़ती हुई समस्याओं में नित्य नई नई और समस्याओं का जुड़ जाना इस बात को प्रकट करता है कि हमने गांधी जी के सादा जीवन और जीवन की पवित्रता के सिद्वान्तों को भूला दिया है। स्वतंत्रता के पश्चात् राष्ट्र के जीवन में जो अनेक परिवर्तन आये हैं उनमें से कुछ की मैं यहां चर्चा कर देना आवश्यक समझता हूँ। उन्हें सामने रखकर प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं विचारना है कि क्या हम सचमुच गांधी जी के मार्ग पर चल रहे हैं।

देश में शराब का जोर

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत किसी को यह आशा नहीं थी कि यह दिन भी आयेगा जब सरकार करोड़ों रूपये की आय बढ़ाने के लिये खुले रूप में लोगों को शराब पीने के लिये सुविधा देगी। महात्मा गांधी जी के आन्दोलनों में शराब की दुकानों पर तो पिकेटिंग किया जाता था। पिकेटिंग करते हुए हजारों भाई–बहन जेल तक गये। स्वराज्य मिलने के पश्चात् शराब का प्रयोग बढ़ता चला गया। अब स्थिति यह है कि प्रत्येक राज्य सरकार शराब की आय बढ़ाने के लिए शराब की ठेके की दुकानों में बराबर वृद्धि कर रही है। जिन राज्यों में मद्य निषेध लागू था वहां भी अब शराब के इस्तेमाल में छूट दे दी गई।

प्रशासन के बढ़ते खर्च

स्वराज्य मिलने पर महात्मा गांधी ने जोर दिया था कि भारत के राष्ट्रपति शानशौकत से न रह कर साधारण मकान में रहें। उन्होंने यह भी सलाह दी थी कि प्रशासन को चलाने वाले मंत्री कम

से कम खर्च करें। उन्होंने कहा था कि सादगी से रहकर वे जनता की मुसीबतों को दूर करने का यत्न करें। वे चाहते थे कि छोटी से छोटी झौंपड़ी तक स्वराज्य का प्रकाश पहुंचे। परन्तु आज स्थिति उनके इन विचारों से जरा भी मेल नहीं खा रही। केन्द्रीय और राज्य सरकारों के मंत्रियों के रहन सहन का स्तर बिल्कुल बदल गया है। उनके रहन सहन के ठाठ तो आज पुराने राजा महाराजाओं से भी बढ़ गये हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि जब उनके इस प्रकार के शाही रहन सहन की आलोचना की गई तो भारत की प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी ने उनका बचाव करते हुए कहा कि उनके रहन सहन से अधिक शानदार रहन सहन तो भारत के अनेकों पूंजीपतियों का है। मेरे विचार से इस प्रकार के बचाव से मंत्रियों के रहन–सहन में सादगी की भावना नहीं आ सकती। मंत्रियों की कोठियों और बंगलों की सजावट के लिए विदेशी सामान का प्रयोग किया जाना गांधी जी के रास्ते के सर्वथा विपरीत हे।

विदेशी सामान का प्रयोग

आयात निर्यात की वर्तमान नीति इस प्रकार की बन गई है कि जिसने भारत की गरीब जनता की अर्थव्यवस्था को और खराब कर दिया है। भारत सरकार के आयात सामान की सूची का अध्ययन करने से पता चलता है कि विदेशों से करोड़ों रूपये की सौन्दर्य प्रसाधन की वस्तुएं मंगाई गईं जो इस बात को प्रगट करता है कि स्वदेशी की भावना समाप्त हो चुकी है।

एक तरफ तो हम अपने देश के विकास के लिये अरबों रूपये का ऋण विदेशों से ले रहे हैं और दूसरी तरफ पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव में बहकर विदेशों से करोड़ों रूपये का फैशन का सामान मंगा रहे हैं। मेरी दृष्टि से यह सब गांधी जी की विचारधारा के विपरीत ही हो रहा है।

भ्रष्टाचार का जोर

गांधी जी ने ईमानदारी पर सबसे अधिक जोर दिया और चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति ईमानदारी के साथ अपना जीवन यापन करे। वे चाहते थे कि सम्पत्ति कुछ व्यक्तियों तक सीमित न रहकर गरीब मजदूर किसान सबके पास पहुंचे। परन्तु आज स्थिति इसके सर्वथा विपरीत है। भ्रष्टाचार के मामलों में सरकार को चलाने वाले अनेक मंत्री लिप्त हैं। अफसरों का भ्रष्टाचार तो बहुत ही जड़ पकड़ गया है। छोटे से छोटे कर्मचारी से लेकर बड़े से बड़े अफसर तक रिश्वत लेने में संकोच नहीं करते। इसका परिणाम यह है कि सारे राष्ट्र में भ्रष्टाचार इतना व्याप्त हो चुका है कि अब उससे पीछा छुड़ाना मुश्किल हो रहा हे।

गरीब को राहत नहीं

इतने वर्ष बीत जाने पर भी आज गरीब को राहत नहीं। गांधी जी चाहते थे कि भारत के गरीब से गरीब व्यक्ति को रोटी कपड़ा मिले। इसके बच्चों की शिक्षा का प्रबन्ध हो और वह यह महसूस करे कि उसके घर में आजादी का दीपक जल रहा है, परन्तु आज वस्तुस्थिति इसके विपरीत है। गरीब बढ़ती हुई मंहगाई के कारण सुख के साथ जीवन नहीं बिता सकता। लाखों मजदूर यदि ग्रामों में कृषि और छोटे उद्योग धन्धों में अपनी शक्ति लगाते तो उसका उन्हें और देश को और

अधिक लाभ पहुंच सकता था। गांधी जी ने ग्रामों को आत्मनिर्भर बनाने पर जो जोर दिया था, उस में भी सफलता मिलती।

निष्ठा के साथ काम नहीं

गांधी जी कहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति पूरी निष्ठा के साथ अपना काम करे। उसकी नियत परिश्रम करके रोटी खाने की हो। परन्तु अब स्थिति इसके विपरीत नजर आ रही हे। कार्यालयों में काम करने वाले पूरे समय काम करने को तैयार नहीं। मजदूर वर्ग कल कारखानों के काम को मन लगाकर पूरा करने को तैयार नहीं। सारे देश में अधिकारों की मांग का जोर है। कर्तव्य पालन और निष्ठा के साथ काम करने को कोई तैयार नहीं। क्या यह गांधी जी के सिद्धान्तों के अनुकूल है ?

सबसे बड़ी भूल इस सम्बन्ध में यह हुई है कि प्रशासन को चलाने वाले मंत्रियों ने ही अपने उत्तरदायित्व का ठीक तरह से पालन नहीं किया। उन्होंने अपने साथियों को अनुचित रूप से लाभ पहुँचाने की जो नीति अपनाई, उसका भी अफसरों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा और सरकारी काम काज में स्थिरता नहीं रह पाई।

ये सब ऐसी समस्याएं हैं कि जिनका हमारे नेताओं और शासकों को सुलझाने का यत्न करना है। गरीब के मकान और झोंपड़ी में खुशहाली लाने के लिए हमें गम्भीरता पूर्वक गांधी जी के रास्ते को ही अपनाना होगा। देश की अर्थव्यवस्था में तभी सुधार हो सकेगा, जब शासक अपने आपको एक गरीब देश का सेवक समझें। केवल कागजों पर अंकित शब्द–"गरीबी दूर करो" देश की गरीबी की समस्या को कभी हल न कर सकेंगे।

(पंचायती राज ३० सित. १९७३ से उद्धृत)

महात्माजी का छात्रों के प्रति वात्सल्य

डा. विनोद चन्द्र विद्यालंकार

आज शिक्षा जगत् का सम्पूर्ण परिवेश ऐसा है कि शिक्षक–छात्र के सम्बन्ध व्यवसायात्मक तथा औपचारिक रह गए हैं। पढ़ने–पढ़ाने के अतिरिक्त अन्य किसी भी भावना का वहाँ अभाव है। ऐसे में कल्पना करना भी कठिन होता है कि आचार्य अपने शिष्यों को सन्तानवत् न केवल चाहता है वरन् उनके योगक्षेम के लिए कुछ भी करने को तैयार हो। प्रस्तुत संस्मरण गुरुकुलीय–शिक्षा पद्धति में एक सच्चे आचार्य का शिष्य के प्रति सात्विक ममत्व प्रदर्शित करते हैं। – संपादक

आचार्य महात्मा मुंशीराम जी की गुरुकुल के छात्रों से कितनी आत्मीयता और निज सन्तानवत् स्नेह था, इसके अनेक प्रसंग मिलते हैं। इनमें से उदाहरण के तौर पर एक–दो प्रसंग प्रस्तुत कर रहा हूँ।

गंगा में प्रति वर्ष बरसात में भयंकर बाढ़ आती थी। आचार्य महात्मा मुंशीरामजी सहित हम सब छात्र एवं गुरूकुल के कर्मचारी रातभर जागते, टोकरी भर–भर कर मिट्टी किनारों पर डालते रहते। इस स्थिति में प्रत्येक छात्र के लिये तैरना सीखना और उसमें सफलता प्राप्त करना लगभग अनिवार्य–सा हो गया था। एक बार की बात है कि मेरी कक्षा से एक कक्षा नीचे का सत्यपाल ब्रह्मचारी जो एक अच्छा तैराक था – आकाशचुम्बी लहरों में गंगा पार कर दूसरे किनारे चला गया। जब वह रात ९ बजे तक वापस नहीं आया तो आचार्यवर को अत्यन्त चिन्ता होने लगी और उन्होंने हम लोगों को साथ लेकर उसकी तलाश आरम्भ कर दी। पता चला कि वह तो गंगा पार दूसरे किनारे पर आराम से बैठा है। उसे वापस आने के लिये कई आवाजें दी गयीं पर उस ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। इसस अतिविह्वल, चिंतातुर वृद्ध आचार्यवर स्वयं गंगा में कूद दूसरे तट से छात्र को लाने के लिये तैयार हो गये। उनके इस प्रकार गंगा पार करने को हम उनके शिष्य भला कैसे एक क्षण के लिये भी सहन कर सकते थे। अत्यन्त नम्रता से आचार्यवर को इस साहसिक कदम से रोक हम तीन–चार छात्रों ने गंगा में छलांग लगायी और करीब पौन घण्टे बाद सत्यपाल को वापस गुरुकुल तट पर ले आये। उसने आते ही आचार्य जी का चरणस्पर्श किया तब उन्होंने इतना ही कहा – ''सत्यपाल! तुम्हारा इस प्रकार का साहस निश्चय ही प्रशंसनीय है, पर इतनी देर तक वहाँ रहने से हम सब बहुत चिन्तित थे।' ब्रह्मचारी सत्यपाल ने अपने इस अपराध के लिये जब क्षमा माँगी तब प्रत्येक छात्र के लिये अत्यन्त ममताशील वृद्ध आचार्यवर ने उसे अपनी विशाल भुजाओं में आबद्ध कर सतत् स्नेहधारा से आप्लावित कर दिया।

छात्र–रोगी का वमन अपनी झोली में–

आचार्य महात्मा मुंशीरामजी का यह नियम था कि वे प्रातः सायं विद्यालय एवं महाविद्यालय के आश्रमों, चिकित्सालय, गोशाला, बाग आदि का 'राउण्ड' लगाया करते थे। चिकित्सालय में प्रविष्ट रोगियों से मिलना और उनका कुशल–क्षेम पूछना उनके लिए अनिवार्य–सा था।

(साभार स्वामी श्रद्धानन्द एक विलक्षण व्यक्तित्व से)

एक बार रोगी–गृह में एक छात्र ज्वर से पीड़ित था। गुरूकुल में एक सामान्य परम्परा थी कि जिस श्रेणी का छात्र चिकित्सालय में प्रविष्ट होता था उसी कक्षा के छात्र बारी–बारी से दो–दो घण्टे रोगी की सेवा के लिये रात में जागते रहते थे। कुछ ऐसा संयोग हुआ कि जब महात्माजी रोगी–गृह में आये तो वहाँ कोई भी नहीं था। छात्र को कष्ट में देखकर वे उसके पास बैठ गये और धीरे–धीरे उसका सिर दबाने लगे। उसी समय रोगी छात्र को एकाएक उल्टी आने लगी। महात्माजी ने देखा कि नीचे चिलमची नहीं है। किसी को आवाज देने की बजाय उन्होंने स्वयं अपनी धोती के एक छोर को फैला उसी में वमन ले लिया और चुपके से बाहर जाकर नाली में फैंक आये। तत्पश्चात् जल से रोगी का मुँह साफ कर उसका सिर पुनः धीरे–धीरे दबाने लगे और डाक्टर के आने तक वहाँ बैठे रहे।

सोते छात्र की साँप से रक्षा–

महात्मा जी प्रातः–सायं 'राउण्ड' लगाने के अतिरिक्त आधी रात में भी आश्रम में, विशेषकर छोटे छात्रों के कमरों में चक्कर लगाते थे। शीतकाल में छोटे छात्र प्रायः नींद में अपनी रजाई से अलग, उकड़ हो गहरी नींद में सोये देखे जाते थे। कभी–कभी तो छात्र सोते–सोते तख्त से नीचे लुढ़क जाते थे। आचार्यजी बड़े स्नेह और धीमे से छात्र को उठा तख्त पर सुला देते थे और रजाई आदि उढ़ा देते थे। गुरुकुल में गर्मी और बरसात में साँप, बिच्छुओं की बहुलता हो जाती थी और वे आश्रम भवन में भी पहुँच जाते थे। एक बार की बात है, गर्मी का मौसम था। उन दिनों गुरुकुल में बिजली नहीं लगी थी। पढ़ने के लिये मिट्टी के तेल के हरीकेन लैंप व टेबल लैंप थे। गर्मी के मौसम में आश्रम के कमरों से बाहर तख्त निकाल उसी पर छात्र सोते थे। एक बार इसी मौसम में एक छात्र तख्त नीचे भूमि पर गिरा टाँग पर टाँग रखे बेसुध सो रहा था। उसकी टाँग के ठीक नीचे एक काला नाग लिपट पड़ा था। आचार्य जी रोज के नियम के अनुसार जब वहाँ पहुँचे तो इस भंयकर दृश्य को देख अवाक् से खड़े हो गये। नाजुक स्थिति थी। अगर छात्र को उठाने की चेष्टा करते तो साँप द्वारा उछलकर छात्र को काट लेने का दर था। आचार्यजी ने सबसे पहले कुछ दूरी पर सो रहे कक्षा के अधिष्ठाता को जगाया और सारी स्थिति समझायी। अधिष्ठाता को अत्यन्त सावधानी से बच्चे को उठा तख्त पर लिटा देने और उसी क्षण स्वयं साँप के सिर पर लाठी टिका उसे वहीं कुचल देने का कार्यक्रम बनाया। उसी के अनुसार कार्य किया गया। बालक को सुरक्षित उसके बिस्तर पर सुला दिया गया और साँप का वहीं अन्त कर दिया गया।

–साभार–स्वामी श्रद्धानन्द एक विलक्षण व्यक्तित्व से

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा क्रान्तिकारी विचारों की मौलिक झलक

पं० उम्मेद सिंह विशारद्
वैदिक प्रचारक मो०–६४११५१२०१६

युगों के उपरान्त अठारवीं शताब्दी में इस धरती पर देव दयानन्द ऐसे महान सुधारक थे, जिन्होंने सभी समाज सुधारकों को पीछे छोड़कर एक नयी वैचारिक क्रान्ति का शंखनाद किया। उन्होंने अद्‌भुत साहस दिखाकर धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक कुरूतियों पर जोरदार प्रहार किया। ऐसे कठिनतम कार्य को तो एक ऋत देवता ही कर सकता था।

भारत के इतिहास में एक महत्वपूर्ण बात पायी जाती है कि जिन्होंने सम्पूर्ण मानव जाति के जीवन को पलट दिया वे आबाल ब्रह्मचारी रहे हैं। ऋषि दयानन्द आदित्य ब्रह्मचारी थे। स्वामी शंकराचार्य आबाल ब्रह्मचारी थे। स्वामी विवेकानन्द भी आबाल ब्रह्मचारी थे। महात्मा गांधी आबाल ब्रह्मचारी तो न थे, परन्तु ब्रह्मचारी रहने का उनका संकल्प दृढ़ था। इन महापुरुषों के विचारों ने भारत के कोने–कोने को व्याप लिया था। अपने–अपने समय में महान कार्य किया और एक दूसरे से कड़ी जोड़ने का कार्य किया। ऐसा प्रतीत होता है कि भविष्य में भी इस देश का कर्णधार वही हो सकेगा, जो आबाल ब्रह्मचारी रहकर देश की चुनौतियों को स्वीकार कर चैलेन्ज करेगा।

देखने में आया कि महर्षि दयानन्द जी ने समकालीन व जिन कुरीतियों के संस्कार भारत के नर–नारी में खून के एक–एक कतरे में समा गये थे, उन पर प्रहार किया, जिनकी जड़ें बहुत गहरी चली गयी थीं। यह अपने आप में सर्वोच्च महान कार्य था, आइए विचार करते हैं।

१. धार्मिक क्षेत्र में रूढ़िवाद पर प्रहार – भारत का धर्म वेदों से बंधा हुआ था और नर–नारी में वेदों के प्रति अगाध श्रद्धा थी और हिन्दू धर्म की आधार शिला वेद थे। हिन्दू लोग वेदों से इधर–उधर नहीं जा सकते थे। किन्तु दयानन्द से पूर्व वेदों के विद्वानों ने वेदों के अर्थ का अनर्थ किया हुआ था, उनमें सायणाचार्य, महीधर, मेक्समूलर जेकोजी, शंकराचार्य आदि ने वेद मंत्रों का इतिहासपरक अर्थ करके सम्पूर्ण समाज को गहन अंधेरे कुएं में डाल दिया था। उन्होंने प्रचलित किया कि वेदों में पशुबलि है, वेदों में नारी को पढ़ने का अधिकार नहीं है। वेदों में जाति प्रथा है, वेदों में मूर्ति पूजा है। वेदों में भूत–प्रेत, जादू–टोना है। वेदों में काल्पनिक देवी–देवता हैं। वेदों में छुआछूत है। इस प्रकार वेदों के अर्थों को अपने स्वार्थ के लिये बदल दिया गया था। भारत की भोली जनता इसका शिकार बन गयी थी।

महर्षि दयानन्द जी ने सर्वप्रथम वेदों के रूढ़ि अर्थों पर प्रहार किया, उन्होंने उन मंत्रों के अर्थों को शुद्ध करके प्रमाणित किया कि वेदों में महिलाओं व शूद्रों को पढ़ने का अधिकार है। वेदों में मूर्ति पूजा नहीं है, जाति व्यवस्था नहीं है, पशुबलि नहीं है। वेदों के शब्दों का सही अर्थ विज्ञान व सृष्टि क्रमानुसार करके जनता के सामने रखा और एक वैचारिक नई क्रान्ति ने जन्म लेकर सदियों से चली आ रही अन्य परम्पराओं को धराशायी कर दिया। महर्षि दयानन्द ने धर्म के सत्य अर्थ सामने

रखकर जमाने की दिशा ही बदल दी, जमाने की गर्दन पकड़कर अपने पीछे चलाया।

निरन्तर सत्य, धर्म का प्रचार करते रहने के लिए आर्य समाज क्रान्तीकारी संगठन की स्थापना की। आर्य समाज ने सम्पूर्ण विश्व के अन्धविश्वास की चूलें हिलाकर रख दीं।

२. सामाजिक क्षेत्र में रूढ़िवाद पर प्रहार – महर्षि दयानन्द भूत, वर्तमान तथा भविष्य को पिछले तथा अगले को मिलाकर चलना चाहते थे। उनका सर्वथा मौलिक दृष्टिकोण था। यही कारण था कि सिर्फ भूत के साथ चिपटे रहने वाले रूढ़िवाद का सामाजिक क्षेत्र में उन्होंने बहिष्कार किया। वे सामाजिक कुरूतियों के स्थिरता के पक्षधर नहीं थे। किन्तु उनके समय में हिन्दु समाज नवीनता से डरता था। वह बहुत कठिन दिन थे, सदियों पुरानी सामाजिक कुप्रथाओं को मिटाना आसान कार्य नहीं था, किन्तु देव दयानन्द सत्य की राह से जरा भी नहीं डिगे। एक नयी सामाजिक क्रान्ति को जन्म दे ही दिया। ऋषि दयानन्द जी के उद्योग का परिणाम था कि समाज में धीरे–धीरे परिवर्तन आने लगा। स्त्रियों के प्रति जहाँ ''स्त्री शूद्रौं नाधीयाताम'' का राग अलापा जाता था, वहाँ कन्याओं को पढ़ने के लिए पाठशालायें खोली जाने लगी। शूद्रों पर शोषण वर्ती बदलने लगी। यज्ञोपवीत पहनने का सबको अधिकार मिल गया। जातिवाद, भेदभाव, छुआछूत, मृत्युभोज, काल्पनिक देवी–देवता और अनेक सामाजिक कुरूतियाँ बदलने लगी। ऋषि दयानन्द ने जो समाज की रूप–रेखा बना दी, उसी को लेकर २०वीं शताब्दी के सामाजिक तथा राजनैतिक नेताओं ने कार्य किया। महात्मा गाँधी ने उन्हीं सुधारों का अनुसरण किया।

३. राजनैतिक क्षेत्र में प्रहार – ऋषि दयानन्द की विचारधारा का आधार रूढ़िवाद का उन्मूलन करना था, राष्ट्र के नेतृत्व में जिसका राज्य चला आ रहा हो, चाहे उसमें कई विकृतियाँ हों, वही ठीक है। उन्होंने उस पर भी प्रहार किया। उन्होंने कहा जब तक राष्ट्र का नेतृत्व करने वाला विद्वान, धार्मिक व सदाचारी व सादगी वाला न हो, तब तक वह कुशल शासन नहीं दे सकता है। उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के ८वें सम्मुलास में लिखा–अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य प्रमाद परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की कथा ही क्या कहनी, जो कुछ भी है सो विदेशियों से पदाक्रान्त हो रहा है। दुर्दिन जब आता है तब देश को अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। उन्होंने राष्ट्र की उन्नति के विकास में धर्मशक्ति वेदानुकूल + राजशक्ति वेदानुकूल + ज्ञानभक्ति वेदानुकूल + और धनशक्ति वेदानुकूल सत्य के आधार पर होनी चाहिए। इस प्रकार महर्षि दयानन्द जी स्वतन्त्र भारत में स्वस्थ, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक परिवर्तन करके भारत को पुनः जगत गुरू, धर्मगुरू, सोने की चिड़िया बनाना चाहते थे, जिसका प्रभाव वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व पर शनै–शनै पड़ने लगा है। ऐसे महान देव पुरुष को हम गर्व से भारत का पितामह कह सकते हैं।

लौह पुरूष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

लेखक – स्वामी सदानन्द सरस्वती
(दयानन्द मठ, दीनानगर)

जन्म–

महर्षि दयानन्द १८७६ ईस्वी में पंजाब आए। उनके शुभागमन से इस वीर भूमि के निवासियों में चेतना का संचार हुआ। नवजागरण की इस शुभ वेला में सरदार भगवान सिंह के घर पौष मास विक्रम संवत् १९३४ की पूर्णिमा को बालक के हर सिंह ने जन्म लिया। यही बालक आगे चलकर स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के नाम से विख्यात हुआ। लुधियाना जिला ने राष्ट्र को कई विभूतियां दी हैं। राष्ट्रवीर लाजपतराय, यशस्वी दार्शनिक स्वामी दर्शनानन्द तथा स्वाधीनता सेनानी साहित्यकार स्वामी सत्यदेव जी परिब्राजक भी इसी की देन थे। इसी जिला के मोही ग्राम में जन्म लेकर स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने इसे गौरवान्वित किया। श्री पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार पूर्व कुलपति गुरूकुल कांगड़ी भी इसी जिला के हैं।

परिवार–

बालक केहर सिंह के पूर्वज हल्दी घाटी से आकर यहां बसे थे। उनकी रगों में राजस्थान के शूरवीरों व बलिदानियों का उष्ण रक्त बह रहा था। वीरभूमि पंजाब के वातावरण में पल कर केहरसिंह यथा नाम तथा गुण बन गये। सरदार भगवान सिंह जी की पत्नी का देहान्त हो गया इसलिए केहर सिंह का लालन – पालन उनके ननिहाल कस्बा लताला में हुआ।

आर्य समाज का परिचय–

लताला में श्री पं० बिशनदास जी उदासी महात्मा से बैद्यक पढ़ते रहे। इन्हीं पण्डित जी के सत्संग से वैदिक धर्म के संस्कार विचार मिले और इन्हीं महात्मा जी के डेरे पर महात्माओं के सत्संग से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत के पालन का संकल्प करके विरक्त हो गये।

गृहत्याग और सन्यास–

पिता जी की चाह थी कि वह सेना में जनरल कर्नल बनें परन्तु केहर सिंह वैभवशाली परिवार को त्यागकर सन्यासी बन गये। धर्मशास्त्रों का पठन पाठन संस्कृत का अभ्यास व उपदेश देते हुए कई वर्ष केवल कौपीनधारी रहे। आर्य समाज के नेताओं व विद्वानों में सर्वप्रथम आपने ही (१९५७ विक्रम) सन्यास लिया।

विदेशों में–

संन्यास लेकर आप ३–४ वर्ष के लिए दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों में धर्म प्रचार करते रहे। इसके लिए किसी सभा संस्था से आपने कोई आर्थिक सहायता नहीं ली। स्वदेश लौटे तो पं० बिशनदास जी की आज्ञा से विधिवत आर्य समाज के कार्य में जुट गए। योगाभ्यास, स्वाध्याय, राष्ट्रभाषा प्रचार, ग्राम सुधार, ब्रह्मचर्य, व्यायाम आदि के लिए कई वर्ष रामामण्डी को केन्द्र बनाकर

कार्य किया। फिर लुधियाना को केन्द्र बना लिया आपके तप, तेज व त्याग से सारा पंजाब प्रभावित हुआ।

पुनः विदेश यात्रा–

१६१४ ई० में आप मारीशस में वेद प्रचार के लिए गये। तीन वर्ष तक आपने वहां धर्मोपदेश करते हुए वहां के लोगों को संगठन सूत्र में बांधा। भारत के राष्ट्रीय हितों की वहां रक्षा की। राष्ट्रभाषा का प्रचार किया। जनता का नैतिक उत्थान तथा चरित्र निर्माण किया।

स्वतन्त्रता संग्राम में–

१६१६ ई० में स्वदेश लौट कर आर्य समाज के कार्य के साथ राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़े। १६१६ ई० में मार्शल ला के दिनों में पण्डित मदनमोहन मालवीय जी की प्रेरणा पर आपने कांग्रेस को विशेष सहयोग दिया। १६२० ई० में बर्मा गये। वहां धर्म प्रचार के साथ स्वराज्य का प्रचार किया। माण्डले की ईदगाह से २५००० के जनसमूह में स्वामी श्रद्धानन्द जी के साथ स्वराज्य का खुल्लम खुल्ला प्रचार किया। अंग्रेज सरकार की आंख में आप कांटे की भाँति चुभने लगे।

काल कोठरी मे–

१६३० ई० में पंजाब कांग्रेस के सब नेता जब जेलों में बन्द थे तो आपने सत्याग्रह को चलाया। डा० मुहम्मद आलम के जेल जाने पर आप कुछ समय के लिए प्रदेश कांग्रेस के प्रधान भी बनाए गये। इस काल में आंध्र प्रदेश के विख्यात कांग्रेसी नेता व स्वतन्त्रता सेनानी पं० नरेन्द्र (हैदराबाद) इत्यादि को आपने जेल भेजा।

१६३० ई० में लाहौर में कांग्रेस की एक प्रचण्ड सभा से अध्यक्ष पद से एक भाषण देने पर आपको बन्दी बना लिया गया। आपकी गतिविधियों के कारण श्रीमद्दयानन्द उपदेशक विद्यालय की सरकार ने तलाशी ली। स्वराज्य संग्राम में केवल आर्य समाज के उपदेशक विद्यालय की ही तलाशी ली गई।

विद्रोह का आरोप–

१६४२ ई० में भारत छोड़ो आन्दोलन का प्रचार कर रहे थे कि आपने भापड़ोदा कस्बा हरियाणा में एक बैठक बुलाकर हरियाणा के चौधरियों से कहा कि सेना में कार्य करने वाले अपने पुत्रों तथा सगे सम्बन्धियों से आप कहें कि सत्याग्रहियों पर गोली मत चलाएं। आप की हरियाणा यात्रा का अपूर्व प्रभाव पड़ा। सरकार यह सहन न कर सकी। वायसराय के विशेष आदेश से आप को शाही किला लाहौर में बन्द करके अमानुषिक यातनाएं दी गई। किला से छोडे गए तो विश्व युद्ध की समाप्ति तक दीनानगर में नजरबन्द किए गए। आप पर कई प्रतिबन्ध लगाए गए। जब आप शाही किला में बन्दी बनाए गए तो पंजाब के गवर्नर के वध का षड़यन्त्र करने का भी आरोप लगाया गया।

क्रांतिकारियों को शरण–

आप दस वर्ष श्री मद्दयानन्द उपदेशक विद्यालय के आचार्य पद पर आसीन रहे और

सैंकड़ों योग्य शिष्य आर्य समाज को प्रदान किये जो उनके चरण चिन्हों पर चलते हुए आर्य समाज का प्रचार कर रहे हैं। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिष्ठाता वेद प्रचार का कार्यभार भी आपके कन्धों पर था। तब आपने समय–समय पर कई भूमिगत क्रांतिकारियों को लाहौर में शरण दी।

१६३८ ई० में दयानन्द मठ दीनानगर की स्थापना करके इसे मानव केन्द्र बनाया। धर्म प्रचार संस्कृत प्रसार का तो यह केन्द्र ही है। सहसों रोगी प्रतिदिन यहां धर्मार्थ औषधालय से चिकित्सा करवाते हैं। इस आश्रम में भी देश के स्वतन्त्र होने तक कई क्रांतिकारी देशभक्त भूमिगत होने पर शरण पाते रहे, महात्मा गांधी जी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लेने के लिए स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के सुशिष्य यति जी को विशेष रूप से दयानन्द मठ से ही सत्याग्रह करने की आज्ञा दी थी। इस समय उनके सुयोग्य उत्तराधिकारी पूज्य स्वामी सर्वानन्द जी महाराज इस मठ के अध्यक्ष थे।

नवाबों से टक्कर–

आपने मालेरकोटला, लोहारू व निजाम हैदराबाद के विरूद्ध सफल मोर्चे लगाकर जन अधिकारों की रक्षा की। आपके सफल व कुशल नेतृत्व से आर्य समाज को अपूर्व विजय प्राप्त हुई। महात्मा गांधी आदि नेता भी आपकी कार्यक्षमता से अत्यन्त प्रभावित हुए इन संघर्षों से स्वराज्य आन्दोलन की गति तीव्र हुई।

लहूलुहान–

लुहारू में तो आप पर कुल्हाड़ों व लाठियों से प्राण घातक प्रहार किये गये। आजन्म ब्रह्मचारी ६५ वर्ष की आयु में इन भयंकर प्रहारों में भी अडिग खड़े रहे। आप के सिर पर इन घावों के इक्कीस चिन्ह थे। एक तो बहुत बड़ा निशान दूर से ही दीख जाता था।

विदेशों में राष्ट्रीय दूत–

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् भी एक बार आप पूर्वी अफ्रीका में आर्य समाज के प्रचार के लिए गए। देश स्वतन्त्र हुआ तो भारत सरकार की विशेष प्रार्थना पर आप पूर्वी अफ्रीका व मारीशस की यात्रा पर गये। आप ने इन देशों में रहने वाले भारतीयों की सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक अवस्था का अध्ययन किया और विदेशों में भारतीय हितों की रक्षा के लिए बड़ा काम किया। मारीशस की स्वतन्त्रता के लिए आपने मार्ग प्रशस्त करने के लिए बड़ा काम किया।

बहुमुखी प्रतिभा –तेजस्वी व्यक्तित्व–

अस्पृश्यता निवारण व दलितोद्धार के लिए आपने अविस्मरणीय काम किया। स्वदेशी प्रचार, गोरक्षा, राष्ट्रभाषा प्रचार, स्त्री शिक्षा के लिए आपने सारे देश का कई बार भ्रमण किया। पीड़ित सेवा के लिए सदैव अग्रणी रहे। आप कई भाषाओं के विद्वान, लेखक, सुवक्ता व इतिहास के सर्मज्ञ विद्वान थे। आप वर्षों आर्य समाज के सर्वोच्च संगठन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के कार्यकर्त्ता प्रधान रहे।

महाप्रयाण–

'Sound mind in a sound body' बलवान शरीर में बलवान आत्मा की उक्ति आप पर अक्षरणः चरितार्थ होती है। भीमकाय स्वतन्त्रानन्द इतिहास में वर्णित हनुमान, भीष्म, दयानन्द सरीखे ब्रह्मचारियों की कड़ी में से एक थे १३–०४–१६५५ को बम्बई में आप को निर्वाण प्राप्त हुए।

कल्याणमार्ग के पथिक : स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज

प्रद्युम्न आर्य

कल्याणमार्ग का पथिक यह नाम मानस पटल पर आते ही आर्य जगत में एक महान क्रान्तदर्शी, निर्भीक, सन्यासी, राष्ट्रभक्त, ऋषिभक्त, कर्मयोगी और एक बलिदानी के व्यक्तित्व की चित्रावली प्रस्तुत हो जाती है। मन में एक क्रान्ति की आभा परिलक्षित होने लगती है। जिन्हें आर्य समाज के इतिहास में श्रद्धा और सम्मान से हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती के नाम से जाना जाता है जो स्वतंत्रता के महा संग्राम में एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में स्थित थे। आर्य समाज के आन्दोलन में स्वामी श्रद्धानन्द का नाम और कार्य महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व और कृतित्व के ठीक नीचे ही सुशोभित होता है। उन्होंने धर्म समाज, राष्ट्र तथा शिक्षा के चतुर्दिक प्रस्तुत क्षेत्रों में अपने मौलिक चिन्तन तथा प्रबल कर्मठ शक्ति से नवीन क्रांति का सूत्रपात किया। आर्य समाज के धर्मप्रचार कार्यक्रम को उन्होंने नूतन आयाम दिया तो शुद्धि, संगठन तथा वर्णाश्रमधर्म के वास्तविक अनुपालन पर जोर देकर उन्होंने भारतीय समाज में नवचेतना उत्पन्न भी की। देश के प्रति कर्तव्यपालन के भाव ने उन्हें कांग्रेस आन्दोलन में सम्मिलित होने की प्रेरणा दी किंतु वे अपने युग के अन्य नेताओं की भांति केवल व्याख्यान मंच से दहाड़ने वाले वाक्शूर की ही भांति मुखर नहीं हुए अपितु अवसर आने पर उन्होंने एक निर्भीक सन्यासी के बाने की रक्षा करते हुए आक्रामक संगीनों के समक्ष अपनी छाती खोलने का साहस भी दिखाया। भारतीय शिक्षा को पुरातन गुरूकुलीय शिक्षा के अनुरूप ढालने का उनका प्रयास तो सर्वथा अनूठा ही था।

कल्याण मार्ग का पथिक की विवेचना देते हुए महान साहित्यकार एवं पुरातत्ववेत्ता डॉ. भवानी लाल भारतीय ने कहा कि ''श्रद्धानन्द ने अपनी आत्मकथा को 'कल्याण मार्ग का पथिक'' नाम प्रदान कर अपने प्रारम्भिक जीवन की कटु यथार्थता तथा उसके मंगलोन्मुख होने की ही कहानी प्रस्तुत की है। स्वामी श्रद्धानन्द जहाँ कर्मक्षेत्र के अद्वितीय योद्धा थे, वहीं वे एक सफल लेखक तथा साहित्यकार भी थे। कर्मठता तथा बौद्धिकता का ऐसा समन्वय प्रायः बहुत कम लोगों में दिखाई देता है।

तो आइये उस महान व्यक्तित्व के जीवन दर्शन का कुछ तो स्मरण करें। क्योंकि यह श्रद्धानन्द बलिदान दिवस का महान पर्व उनके बलिदान की याद दिलाता रहेगा जिसको उन्होंने अपने रक्त कणों से पल्लवित किया है। वे ऐसे महापुरूष थे जिन्होंने 'असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय'' उपनिषद् के रहस्य को अपने जीवन दर्शन से जोड़कर प्रेरणास्पद बना दिया।

पजाब के जालन्धर जिले में सतलुज नदी के किनारे तलवन उप नगर में सन् 1856 में नानक चन्द्र के घर उनका जन्म हुआ। उच्च शिक्षा विभिन्न स्थानों (बलिया, बनारस, बरेली, इलाहाबाद) पर हुई, जीवन की स्वच्छन्दता अभिशाप बन गई, उनके अन्दर अनेक अवगुण आ गये वे नास्तिक भी हो गये। जीवन सुधार के लिए किए गये पिता के सभी प्रयास विफल रहे। अगस्त 1879 को महर्षि दयानन्द जी का बरेली में आगमन हुआ और पिता नानक चन्द्र ने स्वामी जी के व्याख्यान को सुना तो नास्तिक पुत्र के संशय निवृत्ति की आशा जगी। स्वामी श्रद्धानन्द जी अपनी जीवनी में लिखते हैं कि पिता ने घर आते ही कहा बेटा मुंशीराम एक दण्डी सन्यासी

आये है बड़े विद्वान और योगीराज हैं, उनकी वक्तृता सुनकर तुम्हारे संशय दूर हो पाएंगे, कल मेरे साथ चलना। उत्तर में हां कह दी। परंतु मन में यही भाव रहा कि केवल संस्कृत जानने वाला साधु बुद्धि की क्या बात करेगा। लेकिन दूसरे दिन जब उनके दर्शन किए तो उस दिव्य आदित्य मूर्ति को देखकर श्रद्धा उत्पन्न हुई।

वे अनायास महर्षि की ओर खिंचते चले गये। वे पक्के अनीश्वर वादी थे लेकिन महर्षि के सौजन्य से वे प्रथम श्रेणी के आस्तिक बन गये। महर्षि द्वारा किये गये शंका समाधानों ने उनके समस्त संशय, भ्रम आदि समूल नष्ट कर दिए, उन्होंने महर्षि को अपना गुरू और पथ प्रदर्शक मान लिया। एक बार उन्होंने महर्षि से कहा कि - महाराज आपकी तर्क शक्ति बड़ी प्रबल है, आपने मुझे चुप तो करा दिया परंतु यह विश्वास नहीं दिलाया कि परमेश्वर की कोई हस्ती है।

ऋषिवर ने कहा कि - मैंने कब यह प्रतिज्ञा की थी कि मैं तुम्हारा विश्वास परमेश्वर पर करा दूंगा। तुम्हारा परमेश्वर पर विश्वास उस समय होगा जब वह प्रभु स्वयं तुम्हें विश्वासी बना देंगे। और कठोपनिषद् का यह मंत्र कह सुनाया "नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन" भाव है कि प्रभु की प्राप्ति ईश सम्बन्धी प्रवचनों के सुनने अथवा तीव्र बुद्धि से या अत्याधिक श्रुतिवान् बनने से नहीं होती। जिस किसी पर प्रभु अपनी कृपा करते हैं, उसे अपना भक्त चुन लेते हैं। और इसी महामंत्र की प्रेरणा ने मुंशीराम को कल्याण मार्ग का पथिक महात्मा और अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती के राष्ट्रोत्कृष्ट पद पर स्थापित कराने में महान भूमिका निभाई। महर्षि द्वारा रचित सत्यार्थ प्रकाश पढ़कर उनके मन में आर्य समाज के प्रति समर्पण की भावना जाग उठी और शीघ्र ही वे लाहौर आर्य समाज के अग्रणी नेता माने जाने लगे। धीरे धीरे वे पूरे राष्ट्र के नेता बन गये। महात्मा मुशीराम महर्षि द्वारा निर्देशित प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति के परिपोषक थे। उन्हें दृढ़ विश्वास था कि गुरूकुलीय शिक्षा प्रणाली द्वारा ही मानव मात्र का बहुमुखी विकास संभव है। इसीलिए 1902 में गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना ही नहीं की बल्कि अपनी सम्पत्ति को भी गुरूकुल निर्माण में लगा दिया और अपने पुत्रों को विद्यार्थी के रूप में समर्पित भी किया। आज यह गुरूकुल एक विश्व विद्यालय के रूप में विश्व में ख्याति अर्जित कर रहा है। इनके द्वारा गुरूकुल कुरूक्षेत्र, गुरूकुल इन्द्रप्रस्थ एवं कन्या गुरूकुल दिल्ली जो आज देहरादून स्थानान्तरित हो चुका है तथा अनेक प्रसिद्ध गुरूकुलों की स्थापना की जो आज वेद मार्ग को पोषित करने में विशेष भूमिका निर्वहन कर रहे हैं।

महात्मा मुंशीराम ने 12 अप्रैल 1917 को सन्यास ग्रहण करते समय उन्होंने कहा कि "श्रद्धा मेरे जीवन की अराध्य देवी है, अब भी श्रद्धाभाव से प्रेरित होकर ही संन्यास आश्रम में प्रवेश कर रहा हूँ। इसीलिए इस यज्ञकुण्ड की अग्नि को साक्षी रखकर मैं अपना नाम 'श्रद्धानन्द' रखता हूँ जिसमें मैं अगला सब जीवन भी श्रद्धामय बनाने में सफल हो सकूँ।

राष्ट्रभाषा प्रेम- स्वामी श्रद्धानन्द जी को अपने श्रद्धेय गुरू से स्वराज्य, स्वदेश एवं स्वभाषा आदि उच्च आदर्श विरासत में प्राप्त हुए थे। गुरूकुल कांगड़ी में विज्ञान आदि विषयों सहित सभी विषय हिन्दी में पढ़ाये जाते थे। गुरूकुल से एक पत्र 'सद्धर्म प्रचारक' उर्दू में निकलता था उसके ग्राहक उर्दू के जानने वाले ही थे। लेकिन एक

दिन अचानक वह पत्र सब ग्राहकों के पास हिन्दी भाषा में पहुंचा। यह एक चुनौती ही थी। जिस व्यक्ति ने घोषणा की हो कि वह गुरूकुल में उच्च शिक्षा, मातृ भाषा हिन्दी में देने का प्रबन्ध करेगा उसका पत्र उर्दू में, यह कैसे हो सकता था? वे किस प्रकार चुनौतियों का सामना करते थे एक नहीं अनेक उदाहरण हैं। सत्याग्रह के समय जब जनता का जुलूस दिल्ली घंटाघर की ओर बढ़ रहा था, तब गोरे सिपाहियों ने जुलूस को रोकने के लिए गोली चलाने की धमकी दी थी। साधारण लोग ऐसी धमकी को सुनकर तितर-बितर हो जाते परंतु श्रद्धानन्द ही था जिसने छाती तानकर गोरों को गोली चलाने के लिए ललकारा। इतिहास साक्षी है कि गोरों की संगीने उस निर्भीक राष्ट्रभक्त सन्यासी के सामने झुक गयी। यह उनके अदम्य साहस का एक नमूना ही है।

गांधी जी ने दक्षिण अफ्रीका से स्वामी जी को एक पत्र लिखा था कि "आप अपने गुरूकुल के छात्रों को स्वतंत्रता प्राप्ति के उच्च संस्कारों से सुशोभित कर रहे हैं, भारत लौटने पर मैं आपके चरणों में अपना शीश झुकाना चाहूँगा।"

रेम्जे मेकनाल्ड इंग्लैंड के प्रधानमंत्री थे। सन् 1924 में उन्होंने लिखा था "यदि कोई ईसा मसीह की मूर्ति बनाना चाहे तो वह स्वामी श्रद्धानन्द जी को अपने सम्मुख बिठाले तथा उनकी ही प्रतिमूर्ति बना ले।"

महात्मा गांधी उनको बड़ा भाई कहते थे। श्रद्धानन्द जी ने सर्वप्रथम उन्हें 'महात्मा' कह कर पुकारा था। स्वामी जी को अमृतसर के कांग्रेस अधिवेशन का स्वागताध्यक्ष बनाया गया। इससे कुछ समय पूर्व अमृतसर का जलियांवालाबाग काण्ड घटित हुआ था जिस कारण वहां कांग्रेस का अधिवेशन करवाना असम्भव था। परन्तु महर्षि के उस अनन्य भक्त ने असम्भव को सम्भव कर दिखाया।

उन्होंने असहयोग आन्दोलन में भी अग्रणी नेता के रूप में कार्य किया। एक बार एक अंग्रेज अधिकारी ने पूछा कि- आप अपने गुरूकुल में बम भी बनाते है तो उनका स्पष्ट उत्तर था- हां, बनाता हूँ, मेरा प्रत्येक छात्र एक बम ही तो है।

वे ऐसे आर्य नेता थे जिन्हें जामा मस्जिद के मिम्बर और स्वर्ण मन्दिर के अकाल तख्त साहब से प्रवचन करने का गौरव प्राप्त हुआ।

भारत वर्ष के ऐसे महापुरूषों के कन्धों पर चलकर ही यह भारतीय संस्कृति वर्तमान में प्रफुल्लित हो रही है। 23 दिसम्बर 1926 का वह दिन हमारे लिए महान क्षति का दिन था। आर्य समाज के एक स्तम्भ को महाप्रयाण की ओर अग्रसर करने वाला दिन था जब एक मतान्ध मुस्लिम ने उनकी हत्या कर दी।

आर्य समाज के लिए इस कमी को पूरा करना कठिन ही नहीं दुष्कर भी है। इस महान क्रान्तिकारी, राष्ट्र भक्त, संस्कृति पोषक, दतिलोद्धारक, अमर बलिदानी, क्रान्ति की मशाल और महर्षि के सच्चे अनुयायी स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती को हमारा शत्-शत् नमन्। उनके महान बलिदान को यह राष्ट्र भुला नहीं पायेगा। राष्ट्र हमेशा उनका ऋणी रहेगा। अतः सम्पूर्ण राष्ट्र का यह कर्तव्य है कि आने वाले उनके बलिदान दिवस पर हम यह प्रण लें कि हम उनके मिशन को सत्य और श्रद्धा से आगे बढ़ायें उनके लिए यही हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

-बड़ौत (बागपत)

प्रभु कृपा

टंकारा श्री अरूणा सतीजा

आज से 88 वर्ष पूर्व 23 दिसम्बर 1926 की शाम को गोधुलि बेला में, जब सूर्य अस्ताचल की ओर प्रस्थान कर रहा था ठीक उसी समय धरती पर एक महान आत्मा का प्रस्थान भी देवलोक को हुआ।

उसी अमर बलिदानी महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी को उनकी शहादत के पावन अवसर पर चन्द पंक्तियों द्वारा श्रद्धापूर्वक श्रद्धांजलि उनके चरणों में सादर समर्पित करती हूँ-

वे लोग बड़े भाग्यशाली होते हैं जिन पर प्रभु कृपा बरसती है। जब एक बार बरसना शुरू होती है तो फिर बरसती ही जाती है। ऐसे सौभाग्यशाली लोगों में से एक थे मुंशीराम जिन्होंने वृहस्पति से महात्मा श्रद्धानन्द के नाम से विश्व में ख्याति प्राप्त की।

प्रथम दृष्टा के रूप में वे एक मनचले, नास्तिक, शराबी, मांसाहारी, भोगी, विलासी एवं रईस बाप की बिगड़ी सन्तान थे। पिता दिन रात उनकी चिन्ता से चिन्तित रहते थे।

बरेली में स्वामी जी की सत्संग सभा में उनकी अनुशासन बनायेरखने की ड्यूटी थी। क्योंकि वह एक पुलिस अधिकारी थे। पिता जी स्वामी जी के उपदेशों से काफी प्रभावित थे। वह अपने नास्तिक बेटे को भी वहां ले जाना चाहते थे। शायद वह सुधर जाये। मात्र पिता की आज्ञा के पालन हेतु वह स्वामी जी के सभास्थल पर गये परंतु मन में एक संशय था कि यह संस्कृत पढ़ा साधु मुझे क्या उपदेश देगा। वह नहीं जानता था कि उनके जीवन में सुनहरे अवसर का उदय होने वाला है। स्वामी जी की तेजस्विता तथा दस मिनट के भाषण व उपदेश ने मुंशीराम को ऋषि का ऐसा दीवाना बना दिया कि वह उनके दर्शन के लिए पागल हो उठे।

दोपहर के भोजन के पश्चात वह बेगम बाग की कोठी में पहुंच जाते और ऋषिवर को नमस्ते करने वालों में वह पहले व्यक्ति होते। औरों की तरह वह भी स्वामी जी से प्रश्नोत्तर करते, परंतु सदा निरूत्तर हो जाते। एक दिन उन्होंने स्वामी जी से कहा आप की तर्क शक्ति बड़ी प्रबल है। मुझे तर्को द्वारा चुप तो करा देते हैं परंतु कभी यह विश्वास नहीं दिलाया कि ईश्वर की कोई हस्ती है। स्वामी जी मुस्करायें परंतु बड़ी गम्भीरता से उत्तर दिया। मैंने कब तुम्हारे से प्रतिज्ञा की थी कि मैं तुम्हारा विश्वास ईश्वर से करा दूँगा। तुम्हारा ईश्वर पर तो तब विश्वास होगा जब ईश्वर की कृपा तुम पर होगी।

मुंशीराम के ह्रदय में सुप्त संस्कार एवं धार्मिक भावनाएँ जागृत होने लगी। ऋषि उपदेशों ने उसे कल्याण मार्ग का पथिक बना दिया। नास्तिकता आस्तिकता में बदल गयी। जीवन सन्मार्ग की ओर प्रेरित हो उठा। ईश कृपा के अमृत से उनका ह्रदय लबालब हो गया। प्रभु कृपा से जीवन की प्रत्येक घटना उन्हें परोपकार की ओर खींचने लगी। पत्नी के त्याग ने उन्हें सच्चा सन्यासी बना दिया।

एक दिन मुंशीराम जी मानसिक रोग से ग्रस्त हो गये, आंखे पथरा गई। रात को एक बजे आंख खुली तो पत्नी को बिना खाये पिये अपनी सेवा में पाया। शर्मिन्दगी से अपनी करनी पर क्षमा याचना करने लगे तो देवी ने उत्तर दिया, आप मेरे स्वामी हो आप की नित्य प्रति सेवा करना मेरा कर्तव्य है।'' वह महान रात तो बीत गयी परंतु मुंशीराम को महात्मा मुंशीराम बना गयी। जीवन की हर बुराई पीछे छूट गयी।

जीवन की दूसरी घटना ने उन्हें 32 वर्ष की अवस्था में ही अखण्ड ब्रह्मचारी बना दिया। 21 अगस्त 1897 को उनकी धर्मपत्नी का देहान्त हो गया। पत्नी द्वारा लिखे एक कागज के टुकड़े ने उनके भविष्य का निर्णय कर दिया। आप को तो मुझसे अधिक रूपवती सेविका मिल जायेगी परन्तु इन बच्चों को भूलना मत। रात को घण्टों तक ईश्वर से शक्ति का वर मांगा। प्रभू शक्ति पर उन्हें अटूट विश्वास हो चुका था। अन्त में निश्चय किया कि बच्चों के लिए माता का स्थान भी वह स्वयं लेंगे। इसी भावना ने उन्हें गुरूकुल का आचार्य बना दिया। 17 वर्षो तक स्वयं द्वारा स्थापित विश्व विख्यात गुरूकुल कांगड़ी के आचार्य एवं मुख्य अधिष्ठाता रहने के बाद 12 अप्रैल 1917 को मायापुरी वाटिका कनखल में सन्यास आश्रम में प्रवेश करके स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से विख्यात हुए। इस अवसर पर उन्होंने अपने भाव इस प्रकार प्रगट किये।

''ईश कृपा से श्रद्धा से प्रेरित होकर ही आज तक के जीवन को मैंने पूरा किया हैं, श्रद्धा मेरे जीवन की आराध्या देवी है। अब भी श्रद्धा भाव से प्रेरित होकर ही सन्यास आश्रम में प्रवेश कर रहा हूँ। यज्ञकुंड की अग्नि को साक्षी रखकर मैं अपना नाम श्रद्धानन्द रख रहा हूँ।'' उन्होंने श्रद्धा को गुरू बनाया। किसी से सन्यास दीक्षा नहीं ली। अतः पुत्रैषणा, लोकेषणा, गुरूकुललैषणा त्याग कर निर्द्वन्द्व होकर लेक सेवा में जुट गये।

कठोपनिषद के ऋषि वाजश्रवस तथा अपने गुरू महर्षि स्वामी दयानन्द की तरह सर्व मेघ यज्ञ किया। सबसे पहले अपने ही पुत्रों को गुरूकुल में प्रवेश कराया। 1959 ई. में अपना पुस्तकालय 1964 ई. में सत्यधर्म प्रचारक प्रैस अन्त में तीस हजार रूपये की लागत की अपनी कोठी दान कर सर्व वै पूर्ण स्वाहा करके सर्वमेघ यज्ञ की पूर्णाहुति दे दी। अब तक वह पूर्ण रूप से आर्य समाज की शरण में जा चुके थे। सत्यार्थ प्रकाश ने उनके जीवन को शुद्धता की अन्तिम सीमा तक पहुँचा दिया। उन्होंने आर्य समाज के मंच से अपने प्रथम भाषण में कहा-''हम सब के कर्तव्य व मन्तव्य एक होने चाहिए। उपदेशक बनने का अधिकार मात्र उन्हें ही होना चाहिए जिनका जीवन बोलता हो, दिखाई देता हो। उनके इस व्याख्यान से साईदास इतने प्रभावित हुए तथा अपनी प्रसन्नता व आशा व्यक्त करते हुए उनके मुँह से निकल पड़ा कि आर्य समाज में एक नई स्पिरिट आई है। देखों यह आर्य समाज को तारती है या डुबोती है। एक दिन प्रातः भ्रमण में उन्होंने देखा एक व्यक्ति भेड़, बकरियों, सेमराटो को सिर पर रखकर तेजी से भाग रहा है। इस दृश्य ने उन्हें शुद्ध शाकाहारी बना दिया। दोपहर के भोजन में जब उन्हें मांस भी परोसा गया तो उन्हें इतनी ग्लानि हुई कि मांस से भरा कांसे का कटोरा इतनी जोर से दीवार से मारा कि उसके टुकड़े टुकड़े हो गये। अब वह पंगत में

भी बैठना पसन्द नहीं करते थे-जहां मांस परोसा जाता हो। प्रभु कृपा से ही दुर्गुण तथा दुर्व्यसन एक एक करके दूर हो गये।

अंत में उन्होंने शुद्धिकरण को अपने जीवन का मुख्य अंग बनाया। इसी कार्य को करते हुए उन्होंने अपने प्राण आहुत कर दिये। उनके हृदय में दीन-हीनों के लिए अपार प्रेम था वह सभी प्रकार के भेदों को खत्म कर सब को गले लगाकर आर्य समाज में दीक्षित करना चाहते थे। उनकी अन्तिम इच्छा भी यही थी कि वह एक बार पुनः भारत की पावन भूमि पर जन्म लेकर शुद्धि के द्वारा देश व जाति की सेवा करें।

अपने तप, त्याग, सेवा, वीरता व राष्ट्र प्रेम के कारण वह इतिहास पुरूष बन गये। मुंशीराम स्वामी श्रद्धानन्द वाक्शूर नहीं कर्मशूर थे। वह जो कहते थे वह कर दिखाते थे उनके जीवन का यह पक्ष संसार को असत्य से सत्य की ओर, अधर्म से धर्म की ओर, नास्तिकता से आस्तिकता की ओर, अश्रद्धा से श्रद्धा की ओर चलने की प्रेरणा देता रहेगा। ऐसा व्रती, संकल्पी, चरित्र इतिहास में दुर्लभ मिलता है जो इतने पतन से इतना ऊँचा उठा, जिसने ऊँचाई की बुलन्दियों को भी छू लिया।

महापुरूषों के सम्पर्क से और अन्त में लुप्त सात्विक भावों के उद्बुद्ध होने से ही जीवन में परिवर्तन आता है। यही प्रभु की कृपा कहलाती है। मुंशीराम पर प्रभु कृपा हुई और होती चली गयी। वह पतित जीवन से उठकर एक प्रेरक व मार्गदर्शक बन गये। उनकी मृत्यु पर गांधी जी ने कहा था- वीर कभी बिस्तर पर नहीं मरते वह तो शहादत देते हैं। महर्षि के सम्पर्क के बाद उन पर प्रभू कृपा बरसने लगी थी। उनके हृदय में सतत ज्ञान, अग्नि, श्रद्धा, संकल्प तथा आस्तिकताप अर्थात् ईश्वर पर अटूट विश्वास के कारण वह युग पुरूष बन गये। प्रभु कृपा के बारे में बुलेशाह ने बहुत सुन्दर शब्दों में वर्णन किया है-

चढ़ते सूरज ढलदे देखे, बुझदे दीवे जलते देखे
हीरे दा मूल कोई न पावे, खोटे सिक्के चलदे देखे
जिन्हां दा न जग विच कोई, ओ वी पुतर पलदे देखे
लौकी कहदे दाल न गलती, असी पत्थर गलदे देखे
जिन्हां कदर न कीति रब दी, हथ खाली ओ मलदे देखे

हे मानव तू एक दिन भी अटल विश्वास बनकर जी तू कल नहीं जिन्दगी का आज बन कर जी।

(टंकारा समाचार से साभार)

प्रेरक संस्मरण-

निर्भीक सन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द

स्वामी योगानन्द

अहिंसा का सच्चा स्वरूप

स्वामी श्रद्धानन्द सन् 1919 ई0 स्वतन्त्रता संग्राम क्षेत्र में आये 7 मार्च सन् 1919 ई0 को कांग्रेस के मंच से चांदनी चौक दिल्ली में फिरंगी के बनाए ''रौलर एक्ट'' के विरूद्ध व्याख्यान दिया। वहीं से स्वामी जी के नेतृत्व में एक जुलूस उठकर घंटा घर की ओर चला। जिसमें स्वतन्त्रता के दीवाने तर से कफन बाँधे हथेली पर प्राण हाथों तिरंगा मस्ती से राष्ट्र गान करते हुए।

विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झंडा ऊँचा रहे हमारा।

इस झण्डे की शान न जाने पाये, चाहे जान भले ही जाय।।

सभी दीवाने भारत माँ का ऋण चुकाने के लिये आगे बढ़ रहे थे, जैसे हो जुलूस घंटा घर पर पहुंचा, फिरंगी ने रायफलों पर संगीन चढ़ाकर कहा-अगर आगे बढ़ोगे तो गोली से उड़ा दिये जाओंगे। यह सुनते ही निर्भीक सन्यासी का खून खौल गया सीने के बटन खोलकर कहा अगर हिम्मत हो तो पहले मुझे मारो, जानते हो बुजदिल मौत से डरते है, सन्यासी की निर्भीकता को देखकर फिरंगी की हिंसक भावना अहिंसा के समक्ष घबरा गई। जुलूस गाते हुए आगे बढ़ा।

आप दिखला रहे हैं किसे तुरंशियाँ।

यह नशे वह नहीं जो उतर जायेंगे।।

यह अहिंसा पालन का सच्चा आदर्श है। अहिंसा का पालन करना कायर-डरपोंक बुजदिलों का नहीं अहिंसा यह भी नहीं, जाति, देश, धर्म पर आक्रमण ही रहे हों, हम उनके सामने हाथ जोड़े खड़े हो तो मैं समझता हूँ वह शास्त्र के रहस्य को नहीं जानता।

कांग्रेस से स्वामी जी का इस्तीफा

सन् 1914 में जर्मनी और फिरंगी से युद्ध छिड़ गया था, जर्मनी ने अरबियों से सन्धि कर रखी थी। भारतीय सेनाओं के जहाज फिरंगी की सहायता को जा रहे थे- अदन बन्दरगाह के पास जहाज पहुंचे कि अरबियों ने तोपों से गोले बरसाने शुरू कर दिये। भारतीय सेनाओं ने जहाजों के लंगर-डालकर कहा अरवियों से भी निबटने चलो। युद्ध यहीं छिड़ गया, अरब सेनायें परास्त हो गई मुसलमानों के धार्मिक स्थल मक्का शरीफ और मदीना पर फिरंगी का अधिकार हो गया पर जर्मनी फिरंगी से युद्ध में हार गया। भारतीय मुसलमानों ने फिरंगी के खिलाम धार्मिक स्थलों के कारण खिलाफत शुरू कर दी। रामपुर के मौलाना मुहम्मद अली शौकत अली महात्मा गांधी के साथ-साथ चल पड़े अकबर इलाहाबादी लिखते हैं।

शौकत मियां भी हजरते गाँधी के साथ हैं।

जो गर्दे राह है मगर गांधी के साथ हैं।।

फिरंगी हिन्दू मुस्लिम एकता को देखकर चौंक उठा, उसने मक्का और मदीना को स्वतन्त्र कर मुसलमानों को अपनी तरफ कर लिया लोभी मुसलमानो ने कांग्रेस की आड़ में तबलीग का कार्य शुरू कर दिया, यह देख स्वामी श्रद्धानन्द ने महात्मा गांधी से कहा कि यह आपकी कांग्रेस है या मुस्लिम लीग। महात्मा जी ने कोई उत्तर नहीं दिया। आर्यत्व की रक्षा हेतु स्वामी श्रद्धानन्द ने कांग्रेस से इस्तीफा दे दिया- कांग्रेस से हिन्दुओं को होशयार रहने के लिये "खबरदान" नाम की पुस्तक निकाली।

शुद्धि आन्दोलन

स्वामी श्रद्धानन्द ने कांग्रेस से अलग होते ही शुद्धि आन्दोलन जारी कर दिया दिल्ली के आस-पास के मलकाने राजपूतों के ग्राम के ग्राम शुद्ध करके वैदिक धर्म की दीक्षा देकर राजपूतों में मिला दिये शुद्धि आन्दोलन से इस्लाम का तख्त हिल उठा, गुम नाम चिट्ठियां कत्ल करने की स्वामी जी के पास आने लगी, स्वामी जी इन गीदड़ भभकियों से कहां डरने वाले थे कहने लगे अगर बुढ़ापे में यह अमरत्व जीवन मिल जावे तो मैं अपने को सौभाग्यशाली समझूंगा, इसी दरिम्यान में कुमारी असगरी बेगम जिसका ईमान इस्लामियात से उठ चुका था। शुद्धि के लिए स्वामी जी के पास आई। शरणागत असगरी बेगम को वैदिक धर्म की दीक्षा से महरूम रखना उचित न समझा शुद्ध कर शांति देवी के नाम से सुशोभित कर दिया इस घटना से लीगी मुसलमान और भी बौखला उठा, अपना मतलब सिद्ध करने के लिए मुस्लिम युवक को शंका समाधान के बहाने रिवालवर देकर स्वामी के पास भेजा।

अब्दुल रशीद का कातिलाना हमला

स्वामी जी को बीमारी ने आ घेरा, दिन व दिन शरीर शिथिल होने लगा, इलाज बराबर चल रहा था। बातचीत को डाक्टर ने मना करा दिया था, सेवा में धर्म सिंह लगा था, दफ्तर का कार्य धर्मपाल विद्यालंकार बदायूंनी कर रहे थे, 23 दिसम्बर सन् 1926 ई0 को बृहस्पति के दिन एक मुस्लिम युवक शंका समाधान के बहाने आया, सेवक ने रोककर कहा कहां जाते हो, क्या बात है-युवक बोला स्वामी से शंका समाधान करने आया हूँ सेवक बोला, स्वामी जी बीमार हैं, ठीक होने पर आना, यह बात स्वामी जी के कानों मैं पड़ी-बोले कौन है - आ जाने दो, युवक अन्दर पहुँचा, बोला शंका समाधान को आया हूँ, स्वामी जी ने नाम पूंछा, युवक ने अपना नाम अब्दुल रशीद बताया स्वामी जी ने शंका समाधान स्वस्थ होने पर करने को कहा-युवक मारने का मौका ढूढ़ रहा था, पीने को पानी मांगा, धर्मसिंह पानी लेने गया, युवक ने स्वामी जी को अकेला देखकर जेब से रिवालवर निकाल तीन फायर किये, फायर की आवाज सुनकर धर्मसिंह दौड़ा, युवक को पकड़ना चाहा, उसने धर्मसिंह को भी घायल कर दिया, दफ्तर से धर्मपाल बदायूंनी दौड़े और युवक को घटना स्थल पर पकड़ लिया। कातिल ने छूटने की बड़ी कोशिश और हाथा पाई की मगर धर्मपाल बदायूंनी के चुंगल से न निकल सका, पुलिस ने आकर अपनी हिरासत में कातिल को ले लिया, अभियोग के पश्चात् युवक अब्दुल रशीद को फांसी की सजा हो गई।

हत्यारे अब्दुल रशीद ने शुद्धि के महान नेता स्वामी श्रद्धानन्द जी को आर्यों से हमेशा के लिये विदा कर दिया।

हो गया इक सिरफिरे मुलजिम के हाथों से शहीद।
नाम था उस कातिले मरदूद का अब्दुल रशीद।।

स्वास्थ्य चर्चा-

यज्ञ द्वारा समस्त रोगों का उपचार

वैद्य श्री गजानन्द व्यास आयुर्वेदाचार्य

वर्तमान युग में नाना प्रकार के नित्य नवीन प्राणघातक असाध्य रोगों का प्रवाह प्रवाहित हो रहा है। इस प्रवाह से बचने के लिए संसार के वैज्ञानिकों द्वारा अथक परिश्रम किया जा रहा है, कुछेक रोगों से बचने के लिए सूचीवेध (टीकाकरण) के आविष्कार हुए हैं, पर ये निर्दोष नहीं है, इनसे रूग्णों के शरीर पर विपरीत प्रभाव भी पड़ता देखा जाता है।

यदि हम मुड़कर देखें तो ज्ञात होगा कि सृष्टि के आदि से लेकर अब तक हवन (यज्ञ) का प्रचार समस्त संसार में रह चुका है। भारत में वेदों, उपनिषदों, धर्मशास्त्रों व आयुर्वेद शास्त्रों में स्थान-स्थान पर यज्ञ-चिकित्सा की महिमा का वर्णन मिलता है। कुछेक पाश्चात्य देशों के वैज्ञानिकों ने भी हवन-चिकित्सा के सिद्धान्तों को स्वीकारा है। यवन देशों के तत्त्ववेत्ता प्यूयकी ने अग्नि को वायु-शोधक माना है। जापान, चीन में होम को धोम कहते हैं वे भी मंदिरों में धूप जलाते हैं। पारसी लोगों के बारे में सभी जानते हैं कि वे अग्नि के उपासक हैं।

वर्तमान में हमारे देशवासियों की ऐसी मानसिकता बन गई है कि पाश्चात्य वैज्ञानिकों द्वारा जो कुछ भी भला बुरा कहा जाता है उसे ही देववाणी समझ कर अन्धानुकरण करने में अपनी भलाई समझ बैठे है। अतः कुछेक पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने यज्ञ-चिकित्सा की सार्थकता समझते हुए अपने उद्‌गार प्रकट किये है। यथा ''विज्ञान का नियम है कि स्थूल की अपेक्षा सूक्ष्म अधिक शक्तिशाली होता है।'' यज्ञ सामग्री अग्नि के स्पर्श से सूक्ष्मतम होकर हमारे शरीर में प्रविष्ट कर रोगों के सूक्ष्म कीटाणुओं को नष्ट करती हैं। फ्रांस के रसायनवेत्ता मि. त्रिले ने सिद्ध किया कि लकड़ी जलाने से 'फार्मिक आल्डोहाईड' नामक गैस निकलती है जो हर प्रकार के सूक्ष्म से सूक्ष्म कृमियों को नष्ट करती है। वर्तमान में यह गैस ''फार्मालिन'' के नाम से विक्रय होती है जो मकानों को कृमिहीन करने के काम आती है। मि. त्रिले ने यह भी सिद्ध किया कि शक्कर के जलने से जो गैस बनती है वह भी सूक्ष्म से सूक्ष्म रोग के कीटाणुओं को नष्ट करने के काम आती है। फ्रांस के ही प्रो. टिलबर्ट ने सिद्ध किया कि खाण्ड जलाने से हैजा, तपेदिक, चेचक आदि के कीटाणु शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। प्रो. टाटलिट ने सिद्ध किया कि मुनक्का, किशमिश आदि जलाने से आन्तरिक ज्वर के कीटाणु आधे घण्टे में ही नष्ट हो जाते हैं। प्रो. हेमक्रिम ने सिद्ध किया कि कपूर व घी जलाने से रोग के कृमि शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। वास्तव में जिन सिद्धान्तों को लाखों वर्ष पूर्व हमारे पूज्य ऋषियों ने प्रतिपादित किया था वे ही आज भी पाश्चात्य विज्ञान से सत्य सिद्ध हो रहे हैं।

यज्ञ एक वैज्ञानिक कृत्य है, समस्त कार्य उसकी सम्मति से होना चाहिए जो इस विज्ञान को समझता है। अतः यज्ञ सामग्री द्वारा निकलने वाली गैस हमारे लिए नुकसान कारक नहीं है। अपितु अन्न फलादि की अधिक उत्पत्ति में भी सहायक होती है। गीता में भगवान कृष्ण ने स्पष्ट किया है कि सम्पूर्ण प्राणी अन्न से पैदा होते है, अन्न की उत्पत्ति वर्षा से होती है और वृष्टि यज्ञ से होती है।

कुछेक विद्वानों को यह भ्रान्ति हो रखी है कि कीटाणुवाद के प्रतिपादक पाश्चात्य वैज्ञानिक ही है पर यह उनकी नासमझी है। अथर्ववेद, ऋग्वेद में सूक्ष्म से सूक्ष्म कृमियों का वर्णन किया गया है। दिखाई देने वाले और न दिखाई देने वाले कृमियों को नष्ट कर दिया है। इसी प्रकार क्षय रोगों के कीटाणुओं को नष्ट करने का वर्णन है-अ.का.3, सू.11 मं.1, का 3 सू. 11-मं2.3, 4 अ का 7 सू. 76 मं. 3-4 आदि ऐसे ही चेचक, अपस्मार, कामला, उपदंश आदि अनेक रोगों के कीटाणुओं का वर्णन मिलता है। रोगों की कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए यज्ञ चिकित्सा ही सर्वश्रेष्ठ उपाय बतलाते हुए नित्य हवन करने पर जोर दिया गया है। यदि कोई शंका करें कि आयुर्वेद का आधार त्रिदोषज्ञ है तो फिर कीटाणुवाद से इसका तादात्म्य कैसे? यूँ तो ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में स्थान-स्थान पर कीटाणुओं से होने वाले रोगों का वर्णन मिलता है, जो अकाट्य व शाश्वत सत्य हैं। पर सामान्य ज्ञानानुसार वातादि धातुएँ जिस किसी कारण से विकृत हो तो दोषज्ञ हो जाते हैं, ये ही दोष आगे जाकर पाचनक्रिया को अनियमित कर कीटाणुओं की उत्पत्ति कराते हैं।

पदार्थ-विज्ञान का नियम है कि वस्तु का नितान्त अभाव नहीं होता केवल आकार परिवर्तित होता है। अतः यज्ञ-अग्नि में डाले गये पदार्थ नष्ट नहीं होते बल्कि औषधियों के परमाणु सूक्ष्म हो शक्तिशाली हो जाते हैं तथा वे सूक्ष्म परमाणु हमारे शरीर में श्वास द्वारा पहुँचकर अंगों को पुष्ट करते हैं तथा वहाँ स्थित कीटाणुओं को नष्ट करते हैं जैसा कि वेद भगवान् ने बतलाया है। (अथर्व.1.2.2)

यहाँ संक्षेप में प्रत्येक रोग के निवारण के लिए किन-किन वस्तुओं को हवन-सामग्री के रूप में लिया जाना चाहिए, जैसा वर्णन मिलता है, संक्षेप में इस प्रकार है-

1. मलेरिया नाशक सामग्री- (क) गूगल, गिलोय, तुलसी के पत्ते, अतीस, जायफल, चिरायता, प्रत्येक समभाग (ख) पांडरी, शालपर्णी, ब्राह्मी, मकोय, गुलाब पुष्प, काकोली, लौंग, मुलहठी, हाऊबेर, कपूर, काकोणि, ऊद, सहोड़ा छाल, अकरकरा प्रत्येक समभाग। (ग) देशी शक्कर, 8 गुण घृत यथोचित मात्रा।

2. मधुमेह नाशक सामग्री- (क) हर्र बड़ी, गुठली रहित बहेड़, आंवला, तिल, गिलोय, श्वेत चंदन, बादाम, सुगन्धी कोकिला, जामुन की गुठली, गुड़मार, बेल के पत्ते, गूलर की छाल, शहद समभाग। (ख) गूगल 'क' भाग से दुगनी।

3. चर्मरोग नाशक सामग्री- (क) ब्राह्मी, सत्यानाशी, नीम के पत्ते, गिलोय, चिरायता, गंधक, कपूर, शहद- समभाग (ख) गूगल, सुगन्धवाला, हाऊबेर। 'क' भाग से दुगना।

4. (श्वास) दमानाशक सामग्री- (क) त्रिफला, अगर, तगर, जटामांसी, यष्टी, मुन्नका- 1 ग्राम (ख) गूगल, गिलोय, बिसोहा, दुगुना। (ग) कपूर, देशी आधा भाग, देशी शक्कर 2.5 गुना।

5. संग्रहणी नाशक सामग्री- (क) सफेद जीरा, काला जीरा, बेल का गूदा, सोंठ, पीपल, धनियां, सुगन्धबाला, नागर-मोथा, अजवाइन, इन्द्र जौ, चिरायता, शालपर्णी, पृष्टपणी, गोखरू, लौंग, तेजपत्ता, हरड़, बहेड़ा, आँवला, छोटी इलायची, दालचीनी, नागकेशर, वंशलोचन, बादामगिरी, नारायणगिरी, छुहारा, शीतल चीनी, बड़ी इलायची, समभाग (ख) गुगल, पुराना गुड़ 4 गुणा।

ऋतुअनुसार हवन सामग्री-

बसन्त ऋतु- (क) चिरायता, श्वेत चन्दन, लाल चन्दन, जायफल, कमलगट्टा, कपूर काचरी, इन्द्र जौ, शीतल चीनी, तालिसपत्र, तुलसीपत्र, अगर-तगर मजीठ 1 भाग (ख) धूप का बुरादा, देवदारू, गिलोय, मुनक्का, गुलरत्वक, सुगन्धबाला, हाऊबर 2 भाग (ग) गुगल देशी शक्कर 10 भाग (घ) जावित्री 1/4 भाग- केशर 1/8 भाग।

ग्रीष्म ऋतु- (क) आँवला, जटामांसी, नागरमोथा, वायविडंग, धरीला, दालचीनी, लौंग, चन्दन द्वे, अगर-तगर, मजीठ, बड़ी इलायची, धूप बुरादा, तालिसपत्र, उन्नाव प्रत्येक 1 भाग (ख) गुलाब पुष्प, चिरौंजी, शतावर, खस, गिलोय, सुपारी-दो भाग (ग) गुग्गल-देशी शक्कर 10 भाग (घ) केशर 1/8 भाग।

वर्षा ऋतु- (क) काला अगर, इन्द्र जौ, धूप का बुरादा, तगर, तेजपत्र, बेल का गूदा, गिलोय, तुलसी, बिडंग, नागकेशर, चिरायता। (ख) देवदारू, राल, मकोय, खोपरा, जायफल, जटामांसी, वच, सफेद चन्दन, छुहारा, नीम के पत्ते, मकोय, पंचाग, सुगन्ध कोकिला प्रत्येक 2 भाग। (ग) देशी शक्कर, 8 भाग, गुगल 10 भाग, (घ) छोटी इलायची 1/2 ग्राम केशर 1/8भाग।

शरद ऋतु- (क) चन्दन लाल, चन्दन श्वते, नागकेशर, गिलोय, दालचीनी, पित्तपापड़ा, मोचरस, अगर, इन्द्र जौ, अश्वगंध, पत्रज, चन्दन पीला, चिरौंजी, गूलर की छाल, पीली सरसों, कपूर, काचरी, जायफल, चिरायता, जटामासी, सहदेवी 21/2 भाग (ग) किशमिश 5 भाग, देशी शक्कर 8 भाग (घ) केशर 1/2 भाग।

शिशिर ऋतु- (क) कपूर, विडंग, इलायची, बड़ी मुलेहठी, मोचरस, गिलोय, तुलसी, चिरौंजी, काकड़ा सिंगी, शतावर, दारू हल्दी, पद्मभाख, सुपारी 1 भाग (ख) अखरोट गिरी, मुनक्का, काले तिल, रक्तचंदन, चिरायता, छुहारा, जटामांसी, तम्बारू 21/2 भाग (ग) गूगल 5 भाग, देशी शक्कर 8 भाग (घ)

रेणुका, शंखपुष्पी, कौंचबीज 1/2 भाग।

हेमन्त ऋतु- (क) काली मूसली, पित्तपापड़ा, कूठ, गिलोय, दालचीनी, जावित्री, मुश्क, तालीसपत्र, तेजपत्र, श्वेत चन्दन, प्रत्येक एक भाग (ख) देशी कपूर, कपूर काचरी, मुनक्का, अखरोट-मिंजी, काले तिल, खोपरा गोला, सुगन्ध कांकोली, हाऊबेर गुगल 10 भाग देशी शक्कर 8 भाग, रास्त्रा 1/2 भाग केशर 21.8 ग्राम।

हवन के लिए समिधा के विषय में भी परामर्श दिया गया है कि अगर निम्नलिखित समिधा ली जायें तो कई गुणा फल मिलता है-

अर्क, पलाश, खादिर, अपामार्ग, अश्वगंध औदुम्बर, शमी, दुर्वा, दर्भ, आम्र-बिल्व- चन्दनादि काष्ठ। स्वस्थ मनुष्य की स्वस्थता बनाये रखने के लिए दैनिक यज्ञकर्म में 100-500 आहुतियां दी जानी चाहिए। इस प्रकार यदि वैदिक साहित्य का अध्ययन किया जाये तो ऐसा कोई रोग नहीं जिसका उपचार वहां न प्राप्त हो। यदि प्राचीन ऋषियों के समान आधुनिक समाज में भी यज्ञाग्नि के प्रति निष्ठा तथा श्रद्धा हो तो ऐसा कभी नहीं हो सकता कि ऋषि ने किसी रोग को दूर करने के लिए कोई विधि या यज्ञ सामग्री लिखी हो और कोई व्यक्ति श्रद्धापूर्वक, विधिपूर्वक यज्ञ को करें और रोग दूर न हो। बात केवल श्रद्धा विश्वास और विधि की है।

आबू पर्वत (राजस्थान)

आवश्यक सूचना

दिनांक 23.12.2014 का अंक स्वामी श्रृद्धानन्द विशेषांक प्रकाशित होने के कारण अगला अंक दिनांक 30.12.2014 का प्रकाशित नहीं होगा।

-सम्पादक

सेवा में,

....

....

....

पंजी०सं० आर.एन.आई.-२४४१/५७ - आर्यमित्र
पोस्टल रजि.जी.पी.ओ. लखनऊ/एन.पी.-१४-२०१३-१५

नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ
दूर./फैक्स : ०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०९४१२६७८५७१, मंत्री-०९८३७४०२१९२,
सम्पादक-९५३२७४६६००
ई.मेल-apsabhaup86@gmail.com

एक प्रति ₹ 25/-

आर्य समाज के नियम

(यह नियम समग्र मानव जाति के लिए सार्वत्रिक, सार्वकालिक हैं - सम्पादक)

1. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकर, सर्व शक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर-अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करने योग्य है।
3. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए। किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में स्वतंत्र रहें।

स्वामी-आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक-आचार्य वेदव्रत अवस्थी, मुद्रक प्रकाशक-श्री सियाराम वर्मा, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5-मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है-सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।